ऋग्वेद ओ३म् यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

वर्ष : 35 माघ-फाल्गुन वि0स0 2079 अंक : 2 फरवरी 2023

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

(12 फरवरी 1825 से 30 अक्टूबर 1883)

सामवेद

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

karix
connect • interact

Transforming the way businesses communicate & interact with their customers

Karix empowers organisations to enable smarter, relevant, and personalised conversations with their customers and create seamless customer experiences, across the globe. Purpose-built for enterprises, Karix offers a rich suite of communication channels with superior security standards, unmatched customer support and a reliable cloud-based platform to support all communication needs.

21+
years of industry experience with a stronghold in all major industries

2,000+
Enterprise customers

100+ BN
Omni-channel messages processed annually

24x7
Support provided by over 200 engineers

10,000+
Business processes supported

CUSTOMER ENGAGEMENT SOLUTIONS SUITE

- WhatsApp
- A2P Messaging
- Email
- RCS
- Voice
- Marketing Automation
- Campaign Automation
- Chatbots
- Live Agent Chat

WHY DO FORTUNE 1000 BUSINESSES PREFER KARIX?

- Best in class connectivity
- High available systems
- Hybrid cloud infrastructure
- Deep domain understanding

For more details, visit us at www.karix.com or write to us at marketing@karix.com

ओ३म्

पवमान

वर्ष–34 अंक–2

माघ–फाल्गुन विक्रमी 2079 फरवरी 2023

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,123 दयानन्दाब्द : 198

★

–: संरक्षक :–
स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती
मो. : 9410102568

★

–: अध्यक्ष :–
श्री विजय कुमार
मो. : 9837444469

★

–: सचिव :–
प्रेम प्रकाश शर्मा
मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–
स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–
डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
अवैतनिक
मो. : 9336225967

★

–: सहायक सम्पादक :–
अवैतनिक
मनमोहन कुमार आर्य–
मो. : 9412985121

★

–: कार्यालय :–
वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,
तपोवन मार्ग, देहरादून–248008
दूरभाष : 0135–2787001
मोबाईल : 7895978734 (श्री चन्दन सिंह)

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com
Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ. कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ. रामनाथ वेदालंकार	3
स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य की विशेषताएं	डॉ. कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री	4
ऋषि दयानन्द क्या चाहते थे?	मनमोहन कुमार आर्य	9
वेदों का स्वाध्याय सभी मनुष्यों ...	मनमोहन कुमार आर्य	12
प्रभु का स्वरूप	प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार	15
वेदों का प्रादुर्भाव	डॉ. महेश कुमार शर्मा	17
वृद्धजन सेवा	प्रो. सत्यदेव सिंह	20
आरोग्य और दीर्घायु	स्वामी योगेश्वरानन्द सरस्वती	22
महौषध–शहदकल्प	श्री नीलकण्ठ जी भट्ट	25
ईर्ष्या और बैर की अग्नि बुझाओ	महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती	26
माता–पिता का आशीर्वाद	स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक	28
भूत और भविष्य की चिंताओं से मुक्ति	स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक	29

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
3. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000/– प्रति माह
3.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000/– प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1.	वार्षिक मूल्य	रु. 200/– वार्षिक
2.	15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य	रु. 2000/–

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

वेद और महर्षि दयानन्द

भारतीय संस्कृति के इतिहास में वेद का गौरवपूर्ण स्थान है। प्रथम सृष्टि की आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य तथानियों के आत्मा में एक-एक वेद का प्रकाश किया जानकी विमल राशि का नाम वेद है। वेदों के उत्पन्न करने में ईश्वर का क्या प्रयोजन था? इस प्रश्न के उत्तर में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में लिखा है- जो परमेश्वर अपनी विद्या का हम लोगों के लिए उपदेश न करे तो विद्या से जो परोपकार गुण है, सो उसका न रहे। इससे परमेश्वर ने अपने वेद विद्या का हम लोगों के लिए उपदेश करके सफलता सिद्ध करी है, क्योंकि परमेश्वर हम लोगों का माता-पिता के समान है। हम सब लोग जो उसकी प्रजा हैं, उन पर नित्य कृपा दृष्टि रखता है। जैसे अपने सन्तानों के ऊपर पिता और माता सदैव करुणा को धारण करते हैं कि सब प्रकार से हमारे पुत्र सुख पायें. वैसे ही ईश्वर भी सब मनुष्यादि सृष्टि पर कृपा दृष्टि सदैव रखता है, इससे वेदों का उपदेश हम लोगों के लिए किया है। जो परमेश्वर अपनी वेद विद्या का उपदेश मनुष्यों के लिए न करता तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि किसी को यथावत प्राप्त न होती, उसके बिना परम आनन्द भी किसी को नहीं पदार्थ होता। जैसे परम कृपालु ईश्वर ने प्रजा के सुख के लिए कन्द, मूल, फल और घास आदि छोटे-छोटे पौधे भी रचे हैं, सो ही ईश्वर सब सुखों के प्रकाश करने वाली, सब सत्य विद्याओं से युक्त वेद विद्या का उपदेश भी प्रजा के सुख के लिए क्यों न करता? क्योंकि जितने ब्रह्माण्ड में उत्तम पदार्थ हैं, उनकी प्राप्ति से जितना सुख होता है, सो सुख विद्या प्राप्ति होने के सुख के हजारवें अंश के भी समतुल्य नहीं हो सकता। ऐसा सर्वोत्तम विद्या पदार्थ जो वेद है, उसका उपदेश परमेश्वर क्यों न करता? इससे निश्चय करके यह जानना कि वेद ईश्वर के ही बनाये हैं।

मनु महाराज के अनुसार वेद, पितृगण, देवता और मनुष्यों का सनातन, सर्वदा विद्यमान चक्षु है। लौकिक वस्तुओं के साक्षात्कार के लिए जिस प्रकार नेत्र की उपयोगिता है, उसी प्रकार अलौकिक और आध्यात्मिक तत्वों के रहस्य जानने के लिए वेद की महत्ता है। इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट परिहार के अलौकिक उपाय बताने वाला ग्रन्थ वेद ही है। इसमें अनेकों स्थान में विधि (करणीय कार्य) और निषेध (अकरणीय कार्य) का उल्लेख मिलता है। भारतीय धर्म-सम्प्रदाय परम्परा में चारवाकों के अतिरिक्त कोई भी वेद की निन्दा नहीं करता, अपितु वेद से आंशिक विरोध भी उनकी दृष्टि में वर्जनीय है। वेद की प्रामाणिकता को न मानने वाले दर्शनों पर नास्तिकता की पक्की छाप पड़ी रहती है। आस्तिक वही है, जो वेद की प्रामाणिकता में विश्वास रखे और जो वेद की निन्दा करता है, वह नास्तिक कहलाता है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, वेदों का अध्ययन करने वाला अक्षय्य, अविनाशी और अज्ञय्य लोकों को प्राप्त करता है। महर्षि से पूर्व के भाष्यकारों में से अधिकांश ने वेदों में कर्मकाण्ड के अतिरिक्त अन्य किसी विद्या का आविष्कार नहीं किया था। परन्तु स्वामी दयानन्द '**वेदों में सब विद्याएं हैं**'- यह घोषणा करते हैं। महर्षि और दयानन्द का वेदार्थ और वेदों को जन-जन तक पहुँचाने में अमूल्य योगदान रहा है। यह अंक **महर्षि दयानन्द विशेषांक** के रूप में सुधी पाठकों को समर्पित करते हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

वेदामृत

बल के उत्सवों में

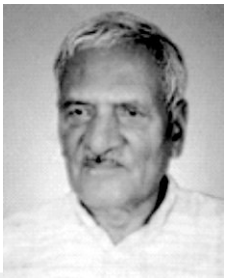

तमप्सन्त भावस उत्सवेशु, नरो नरमवसे तं धनाय ।
सो अन्धे चित् तमसि ज्योतिर्विदत्, मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती।।

ऋग्वेद १.१००.८

ऋषयः वार्शागिराः ऋज्राश्व-अम्बरीश-सहदेव-भयमान-सुराधसः।
देवता इन्द्रः। छन्दः निचृत् त्रिष्टुप्।।

(नरः) पुरुषार्थी मनुष्य (शवसः) बल के (उत्सवेशु) उत्सवों में (तं) उस (नरं) नेता को (अवसे) रक्षण के लिए (अप्सन्त) प्राप्त करते हैं, (तं) उसे (धनाय) ऐश्वर्य के लिए [प्राप्त करते हैं] (सः) वह (अन्धे चित्) अन्धे भी (तमसि) अन्धकार में (ज्योतिः) ज्योति (विदत्) प्राप्त करा देता है। [वह] (मरुत्वान्) प्राणवान् (इन्द्रः) परमात्मा (नः) हमारी (ऊती) रक्षा के लिए (भवतु) हो।

क्षत्रियों के लिए संग्राम बल के उत्सव होते हैं, क्योंकि उनमें उन्हें अपने बल का प्रदर्शन करने का सुअवसर प्राप्त होता है। जब-जब संसार में अधर्म की व्याप्ति और धर्म की ग्लानि हो जाती है, अधार्मिक लोग अपना राज्य-विस्तार करने में संलग्न हो जाते हैं, तब-तब वीर क्षत्रिय लोग धर्म की रक्षा के लिए संग्राम का बिगुल बजाते हैं, बल के उत्सवों का आयोजन करते हैं। परमेश्वर अधर्म के नाश और धर्म की रक्षा के लिए कटिबद्ध हैं, अतः वीरजन अधर्म-संहार के संग्रामों में उन्हीं परमेश्वर को अपना नेता बनाते हैं और रक्षण के लिए उन्हीं का आह्वान करते हैं। जो ऐश्वर्य धार्मिक जनों से छीनकर अधार्मिक शत्रु ने हस्तगत कर रखे होते हैं, उन्हें वापिस दिलाने के लिए भी वे उन्हीं परमप्रभु की शरण में जाते हैं। निःसन्देह प्रभु उन्हें बल के उत्सवों में विजय दिलाते हैं और विपुल ऐश्वर्य प्राप्त कराते हैं। ऐसे ही संग्राम हमारे हृदय में भी चलते हैं। वहां भी आसुरी और दैवी सेना में कड़ा मुकाबला होता है और विजयप्राप्ति के लिए बड़े तीव्र बल-प्रदर्शन की आवश्यकता होती है। तब भी स्मरण किये जाने पर प्रभु रक्षा करते हैं और दिव्य ऐश्वर्यों को प्राप्त कराते हैं।

इन्द्र-प्रभु अन्धे घुप्प अन्धकार में भी ज्योति प्राप्त कराने वाले हैं। जब मन में ऐसी विकट तामसिकता छा जाती है कि कर्तव्य की दिशा सर्वथा आँखों से ओझल प्रतीत होने लगती है, उस समय भी प्रभु ज्योति की रेखा प्रकट करके दिशा-प्रदर्शक बनते हैं। इन्द्र-प्रभु 'मरुत्वान्' हैं, प्राणवान् हैं, समर्थ हैं, भक्त की रक्षा के लिए उत्साहवान् हैं, जागरूक हैं। उन्हीं से हमारी विनय है कि जब-जब हम पर संकट के बादल मंडरायें, हमारी नाव मंझधार में डूबने लगे, हम पर विपत्तियों का पहाड़ आ पड़े, हम असहाय हो जायें, तब-तब वे आकर हमारी रक्षा करें, हमें अपनी शरण में लें, विपदा से हमारा उद्धार करें और हमें पैरों पर खड़ा कर दें। हे इन्द्र प्रभु! तुम हमारी प्रार्थना को सुनो, हम असहायों के सहायक बनकर रक्षा के लिए दौड़ो और रक्षा का वरदान देकर हमें सदा के लिए निश्चिन्त कर दो।

आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालंकार
की पुस्तक वेद-मंजरी से साभार प्रस्तुत

स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य की विशेषताएँ

-डॉ० कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

वेदों में भाषा–चिन्तन के साथ अर्थ के सम्बन्ध में भी विविध रूप में पर्याप्त चिन्तन हुआ है, जिस प्रकार समस्त भाषा चिन्तन का मूल आधार तत्त्व वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है उसी प्रकार अर्थ चिन्तन के भी मूलसिद्धान्त वैदिक साहित्य में प्राप्त होते हैं। वास्तव में अर्थविचार की विशाल परम्परा ऋग्वेद काल से ही प्रारम्भ होकर अन्य संहिताओं ब्राह्मण, ग्रन्थों, आरण्यकों, उपनिषदों और वेदांगों से अत्यन्त विकसित हुई है, इन ग्रन्थों में अर्थपरक कई विषयों पर यत्र–तत्र संकेतों के रूप में अथवा स्पष्ट रूप में प्रकाश डाला गया है। इससे वैदिक अर्थचिन्तन का स्वरूप भी स्पष्ट होता है। अर्थबोध की कई पद्धतियों का निर्देश वैदिक वाङ्मय में संकेततः अथवा स्पष्ट प्राप्त होता है। बाद में वे ही पद्धतियाँ भारतीय अर्थविज्ञान के अन्तर्गत अर्थबोध की विविध विधियों के रूप में क्रमबद्ध और अधिक वैज्ञानिक रूप में विकसित हुई है।

भाषा की आत्मा अर्थ है। शब्द का प्रयोग अर्थ के लिए ही किया जाता है। अर्थात् अर्थ के अभाव में भाषा का कोई महत्त्व नहीं है। शब्द तो अर्थ की अभिव्यक्ति का ही माध्यम है। अर्थ की प्रतीति कराने के लिए ही व्यवहार में शब्द का प्रयोग किया जाता है अथवा यह कह सकते हैं कि भाषा का शब्द शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा। जिस प्रकार शरीर की सहायता से ही आत्मा का प्रत्यक्षीकरण होता है, उसी प्रकार शब्द की सहायता से अर्थ का बोध होता है। भाषा के द्वारा प्रकाशित अर्थ के महत्त्व के विषय में मानव प्राचीन काल से ही विचार करता चला आ रहा है।

वेदों में भाषा–चिन्तन के साथ अर्थ के सम्बन्ध में भी विविध रूप में पर्याप्त चिन्तन हुआ है, जिस प्रकार समस्त भाषा चिन्तन का मूल आधार तत्त्व वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है उसी प्रकार अर्थ चिन्तन के भी मूलसिद्धान्त वैदिक साहित्य में प्राप्त होते हैं। वास्तव में अर्थ विचार की विशाल परम्परा ऋग्वेद काल से ही प्रारम्भ होकर अन्य संहिताओं, ब्राह्मण ग्रन्थों, आरण्यकों, उपनिषदों और वेदांगों से होकर अत्यन्त विकसित हुई है, इन ग्रन्थों में अर्थपरक कई विषयों पर यत्र–तत्र संकेतों के रूप में अथवा स्पष्ट रूप में प्रकाश डाला गया है। अर्थ सम्बन्धी इन विचारों के आलोचनात्मक विवेचन द्वारा एक ओर भारतीय अर्थ चिन्तन का प्रारम्भिक और मूल रूप प्रकाश में आता है तो दूसरी ओर इससे वैदिक अर्थचिन्तन का स्वरूप भी स्पष्ट होता है।

इस सन्दर्भ में यास्क रचित निरुक्त अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यास्क ने शब्दार्थ के क्रमबद्ध चिन्तन की प्राचीन परम्परा को प्रस्तुत किया है। निरुक्त में अर्थातिशय, अर्थविकास, अर्थभेद, पदार्थ, वाक्यार्थ, नामार्थ, आख्यातार्थ, अर्थबोध आदि विषयों पर विस्तृत विचार किया गया है। अर्थ एक गम्भीर तत्त्व है क्योंकि इसका सम्बन्ध मनुष्य के मस्तिष्क से है क्योंकि अर्थतत्त्व का अभिप्राय भाषा के उन अंशों से है जो अर्थ अथवा विचार का बोध कराते हैं। शब्द का प्रतीकात्मक मूल्य अर्थ है जो सर्वध मानसिक बिम्ब के रूप में ही होता है। कोई भी शब्द जिस बोध के प्रयोजन से उच्चारित किया जाता है वही उसक अर्थ होता है। वैदिक वाङ्मय में शब्द की अपेक्षा अर्थ को अधिक महत्त्व दिया गया है।

शब्दों के अनेकार्थक होने से वेद का अर्थबोध हमेशा ही कठिन रहा है। वेद के किस मन्त्र या

किस शब्द से क्या अर्थ मूलतः अभिप्रेत रहा है, यह कहना आज भी सरल नहीं है। जब हम वेदों में प्राप्त अर्थविषयक चिन्तन की समीक्षा करते हैं तो हम देखते हैं कि वेद में अपने अर्थ के स्पष्टीकरण के लिए कुछ विधियों का यथास्थान ग्रहण किया गया है। अर्थबोध की कई पद्धतियों का निर्देश वैदिक वाङ्मय में संकेत रूप में अथवा स्पष्ट प्राप्त होता है। यही तो वेद की विशेषता है कि वह केवल अर्थज्ञान की उपयोगिता का ही विचार नहीं करता अपितु वेदार्थ के स्पष्टीकरण में भी योगदान देता है बाद में वे ही पद्धतियाँ भारतीय अर्थविज्ञान के अन्तर्गत अर्थबोध की विविध विधियों के रूप में क्रमबद्ध और अपेक्षाकृत अधिक वैज्ञानिक रूप में विकसित हुई है।

महर्षि दयानन्द सरस्वतीकृत वेद भाष्य की विशेषताएँ– महर्षि द्वारा सम्पूर्ण यजुर्वेद, ऋग्वेद के 7 वें मण्डल के 62 वें सूक्त के द्वितीय मन्त्र तक और अपने अन्य ग्रन्थों, जैसे ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका, संस्कारविधि, पञ्चमहायज्ञविधि, आर्य्याभिविनय आदि में वेद के विभिन्न मन्त्रों का भाष्य किया गया है। आर्यजगत् के प्रसिद्ध वेदविद्वान् स्मृतिशेष पं० रामनाथ वेदालङ्कार द्वारा अपने पुस्तक आर्ष–ज्योति के वेद–व्याख्या के प्रयास (पृष्ठ 33 से 39) शीर्षक लेख के अनुसार महर्षि दयानन्द सरस्वतीकृत वेद भाष्य की विशेषताएँ संक्षिप्त रूप से इस प्रकार हैं–

स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य की विशेषताएँ–

महर्षि दयानन्द सरस्वती का वेदभाष्य पूर्ववर्ती भाष्यों की अपेक्षा अनेक नवीन विशेषताएं रखता है, जिनमें से कुछ का दिग्दर्शन यहाँ किया जा रहा है।

१. वैदिक देवों का अर्थानुसन्धान–

वेदों में अग्नि, वायु, इन्द्र, अश्विनौ, मित्र, वरुण, अर्यमा, रुद्र, सविता आदि पुलिंगी का तथा अदिति, उषा, सरस्वती, पृथिवी आदि स्त्रीलिंगी देवताओं का पुनः–पुनः वर्णन आता है। उवट, सायण, महीधर आदि पूर्ववर्ती भाष्यकारों ने इन्हें पृथक् स्वतन्त्र देव–देवियां स्वीकार किया था तथा यह माना था कि वेदवर्णित प्रत्येक प्राकृतिक देवता उषा, सूर्य, पृथिवी, आपः, नदी, ओषधि आदि का एक–एक स्वतन्त्र चेतन अभिमानी–देवता है, उसी चेतन देवता की इन नामों से वेद में स्तुति की गयी है। जिन देवताओं का प्राकृतिक स्वरूप निश्चित नहीं है, वे भी स्वतन्त्र देवता हैं। यज्ञों में आह्वान करने पर ये देवता हवि से प्रसन्न होकर यजमान को पुत्र, पौत्र, पशु, धन आदि प्रदान करते हैं। परन्तु स्वामी दयानन्द ने प्रमाणपुरस्सर यह घोषणा की कि वेद अनेकेश्वरवादी नहीं है, अपितु वेदों के विभिन्न पुलिंगी और स्त्रीलिंगी देवता पिता और माता के रूप में एक परमेश्वर के ही गुणकर्म–बोधक विभिन्न नाम हैं।

वेद की वर्णन–शैली की यह अद्भुतता है कि साथ ही वे देवता शरीर में आत्मा, मन, बुद्धि, प्राण, अपान, उदान, चक्षु, श्रोत्र आदि के राष्ट्र में राजा, सेनापति, न्यायाधीश, गृहपति, आचार्य आदि के और भौतिक जगत् में प्रकृति, सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, जल आदि के भी वाचक होते हैं। जहां जैसा प्रकरण हो वहां वैसे अर्थ करने चाहिएं। इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर दयानन्दभाष्य में प्रसंग या औचित्य के अनुसार 'अग्नि' के अग्रणी, विज्ञान–स्वरूप, सर्वविद्योपदेष्टा, स्वयं प्रकाशमान, प्रकाशक परमेश्वर, विद्वान् अध्यापक, उपदेशक, नायक राजा, वीर सेनापति, यज्ञाग्नि, शिल्प में प्रयोक्तव्य भौतिक अग्नि आदि अर्थ किये गये हैं। 'इन्द्र' को ऐश्वर्यशाली परमेश्वर, शत्रुविदारक राजा, सभा शाला सेनान्यायाधीश, विद्यार्थियों की जड़ता का विच्छेदक गुरु, वायु, विद्युत, सूर्य आदि अर्थों में ग्रहण किया गया है। 'रुद्र' को दुष्टरोदक परमात्मा, जीवात्मा, वैद्य, वायु, प्राण, शत्रुसंहारक सेनापति, ब्रह्मचारी आदि अर्थों में व्याख्यात किया गया है। 'अश्विनी' के राजा अमात्य, प्राण–अपान, जल–अग्नि, वायु–विद्युत, सूर्य–चन्द्र, अध्यापक उपदेशक, सभेश–सेनेश आदि अर्थ किये गये हैं।

वैदिक देवियों को भी स्वामी दयानन्द ने भौतिक जगत् एवं शरीर में घटाने के साथ–साथ समाज में भी घटाया है। तदनुसार उनके भाष्य में

'उषा' का अर्थ प्रभातवेला या सन्ध्या के अतिरिक्त उषा के समान ज्ञान से समस्त रूपों की प्रकाशिका विदुषी स्त्री भी किया गया है। इसी प्रकार 'सरस्वती' का अर्थ वाणी एवं वेगवती नदी के अतिरिक्त विदुषी कन्या, प्रशस्त ज्ञानवती विदुषी स्त्री, प्रशस्तविज्ञानयुक्ता पत्नी, शिक्षिता माता एवं वेदादिशास्त्र विज्ञानयुक्ता अध्यापिका भी किया है। प्रचुरता के साथ वैदिक देवताओं को सामाजिक या राष्ट्रिय अर्थों में लेकर सम्पूर्ण मन्त्र को सामाजिक या राष्ट्रपरक अर्थ की रंगत देना स्वामी दयानन्द की ही महत्त्वपूर्ण देन है। इससे पूर्व ब्राह्मणग्रन्थों में ऐसे अर्थों के क्वचित् संकेतमात्र दिये गये थे। स्वामी दयानन्द के द्वारा किये गये अर्थ वेदों ब्राह्मण ग्रन्थों, आरण्यक आदि साहित्य से समर्थित हैं।

2–वेदमन्त्रों की अनेकार्थता–

मन्त्रों के अध्यात्म, अधिदैवत, अधियज्ञ आदि अर्थ करने की पहले से ही प्रवृत्ति थी। यास्क ने अपने निरुक्त में कई स्थलों पर इस प्रकार की मंत्र व्याख्याएं प्रस्तुत की हैं। स्वामी दयानन्द ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया। उन्होंने मन्त्रार्थों को दो भागों में विभक्त किया है पारमार्थिक अर्थ और व्यावहारिक अर्थ। इन्हीं दो में पूर्व आचार्यों से निर्धारित अध्यात्म, अधिदैवत, अधियज्ञ, अधिभूत आदि सकल अर्थ प्रक्रियाएं समाविष्ट हो जाती हैं। परमेश्वर तथा परमेश्वर–प्राप्ति सम्बन्धी अर्थ पारमार्थिक प्रक्रिया में और शेष सब अर्थ व्यावहारिक प्रक्रिया के अन्तर्गत होते हैं। स्वामी दयानन्द ने अपने वेदभाष्य में वेदमन्त्रों की अनेकार्थक योजना अनेक स्थलों पर की है।

ऋग्वेद के प्रथम पांच अग्निदेवताक मन्त्रों की व्याख्या उन्होंने परमेश्वरपरक तथा शिल्पाग्निपरक की है। 'धूरसि धूर्व धूर्वन्तम्' यजु० १.८ में भी अग्नि के अर्थ परमेश्वर तथा शिल्पसाधक अग्नि दोनों लिये हैं। वायुदेवताक ऋ० १.२.१ ३ इन तीनों मन्त्रों की व्याख्या परमेश्वर तथा भौतिक वायु दोनों पक्षों में की है। इसी प्रकार इन्द्र देवता, सूर्य देवता और सोमासि सत्पति ऋ० १.६१.५ आदि मन्त्र श्लेष से परमेश्वर, शालाध्यक्ष तथा सोम ओषधी तीन पक्षों में व्याख्यात किया गया है।

३. ऐतिहासिक अर्थों की उपेक्षा–

वेदमन्त्रों में प्रयुक्त नामों को किन्हीं ऐतिहासिक ऋषियों, ऋषिकाओं, राजाओं, रानियों, नदियों, नगरों आदि के नाम मान लेने की प्रवृत्ति वेदभाष्यकारों में पायी जाती है। वेदार्थ का ऐतिहासिक सम्प्रदाय यास्काचार्य (७०० ई०पू०) से भी पहले विद्यमान था, क्योंकि उन्होंने अपने निरुक्त ग्रन्थ में कई प्रसंगों में इस सम्प्रदाय का उल्लेख किया है। पर अपनी सम्मति उन्होंने इसके विरोध में ही दी है। विदेशों के विद्वान् वेदों में लौकिक इतिहास भले ही मानें, पर आश्चर्य तो तब होता है जब वेदों को सृष्टि के आदि में प्रकट हुआ ईश्वरीय ज्ञान मानने वाले स्कन्दस्वामी, उवट, सायण, महीधर आदि भारतीय भाष्यकार भी अनेक स्थलों पर वेदमन्त्रों की इतिहासपरक व्याख्याएं करते हैं। स्वामी दयानन्द ने अपने सुदीर्घ वेदभाष्य में एक स्थल पर भी इतिहास नहीं माना है। ऋ० भा०भू० में वे स्पष्ट घोषणा करते हैं कि वेदमन्त्रों में इतिहास का लेश भी नहीं है, अतः सायणाचार्य आदि ने जहां–कहीं इतिहास का वर्णन किया है वह भ्रममूलक ही है।

वेदों में लौकिक इतिहास न होने की स्थापना तो अपने ऋग्वेदभाष्य के उपोद्घात में सायण ने भी की थी, पर वेदभाष्य में वे उसका निर्वाह नहीं कर पाये। किन्तु महर्षि दयानन्द ने अपनी प्रतिज्ञा का अपने वेदभाष्य में सर्वत्र निर्वाह किया है। वे अगस्त्य, अत्रि, अम्बरीष, कुत्स, कुशिक, त्रसदस्यु, दिवोदास, वसिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र, शुनःशेप प्रभृति समस्त ऐतिहासिक प्रतीत होने वाले नामों की नैरुक्त पद्धति से व्याख्या करते हैं। सचमुच वेद में लौकिक इतिहास की कल्पना वेद को जर्जर कर देने वाली है। वेदों में इतिहास न मान कर योगार्थ के बल से जो अर्थ करने की पद्धति है उसी से वेद का रहस्यार्थ हृदयंगम किया जा सकता है।

४. पूर्व विनियोगों से स्वतन्त्र वेदार्थ–

पूर्वकाल में दर्श, पौर्णमास, वाजपेय, राजसूय, अश्वमेघ, पुरुषमेघ, सोमयाग आदि विविध श्रौत

यागों में ब्रह्मयज्ञादि पञ्च यज्ञों में, जातकर्मादि विभिन्न संस्कारों में तथा अन्य अनेक विधि–विधानों में वेदमन्त्रों का विनियोग किया गया था। उन विनियोगों की परीक्षा करने से ज्ञात होता है कि उनमें कुछ विनियोग रूपसमृद्ध अर्थात् मन्त्रार्थ से अनुमोदित हैं और कुछ अरूपसमृद्ध हैं अर्थात् या तो मन्त्रार्थ से विरुद्ध हैं या मन्त्रार्थ से असम्बद्ध हैं।

ब्राह्मणग्रन्थकारों ने रूपसमृद्ध विनियोगों से ही यज्ञ की परिपूर्णता मानी थी, तथापि अरूपसमृद्ध विनियोग भी चलते रहे और उन्हें प्रामाणिक भी माना जाता रहा। स्वामी दयानन्द ने यह स्पष्ट घोषणा की कि पूर्वकृत विनियोगों में जो युक्तिसिद्ध, वेदादि प्रमाणों के अनुकूल और मन्त्रार्थ का अनुसरण करने वाले विनियोग हैं, वे ही ग्राह्य हो सकते हैं। साथ ही यह भी माना कि वेदव्याख्या के लिए रूपसमृद्ध विनियोगों का भी अनुसरण करना अनिवार्य नहीं है, उन विनियोगों से स्वतन्त्र होकर भी वेद के व्याख्यान किये जा सकते हैं। अतएव उन्होंने ऋग्वेद एवं यजुर्वेद का अपना भाष्य पूर्व विनियोगों का अनुसरण किये बिना ही लिखा है और भूमिका में यह निर्देश कर दिया है कि मैं तो शब्दार्थतः ही मन्त्रों की व्याख्या करूंगा, जिन्हें अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेघपर्यन्त कर्मकाण्ड का परिचय पाना हो वे ऐतरेय, शतपथ, पूर्वमीमांसा, श्रौतसूत्रादि को देख सकते हैं, किन्तु उनमें जो वेदविरुद्ध विनियोग हैं उन्हें न मानें ।

५. वेदों में विविध विद्याओं का आविष्कार–

महर्षि से पूर्व के भाष्यकारों में से अधिकांश ने वेदों में कर्मकाण्ड के अतिरिक्त अन्य किसी विद्या का आविष्कार नहीं किया था। परन्तु स्वामी दयानन्द 'वेदों में सब विद्याएं हैं' यह घोषणा करते हैं। उन्होंने अपने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थ में ब्रह्मविद्या, सृष्टिविद्या, पृथिव्यादिलोकभ्रमणविद्या, आकर्षणानुकर्षणविद्या, प्रकाश्य प्रकाशकविद्या, गणितविद्या, उपासनाविद्या, मुक्तिविद्या, नौविमानादि निर्माणचालनविद्या, तारयन्त्रविद्या, वैद्यकविद्या, राजविद्या, यज्ञविद्या, कृषि विद्या, शिल्पविद्या, वर्णाश्रमविद्या आदि विविध विद्याओं का वैदिक प्रमाणों सहित प्रतिपादन किया है तथा स्वकीय वेदभाष्य में भी इनका प्रकाश किया है।

६. कतिपय अन्य विशेषताएं–

स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य में कुछ अन्य विशेषताएं भी पायी जाती हैं, जो अन्य वेदभाष्यकारों के भाष्यों में उपलब्ध नहीं होतीं । उदाहरणार्थ, कतिपय विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

(1) दयानन्द सरस्वती वेदमन्त्रों के अश्लील, परमात्मा के स्वभाव एवं सृष्टिनियम के विरुद्ध और लोकविद्वेषकारी अर्थ कहीं नहीं करते।

(2) वे वेदों में मांसभक्षण, पशुबलि, जड़पूजा, मृतकश्राद्ध, जादू टोना, असंभव चमत्कार आदि नहीं मानते। जिन भाष्यकारों ने इस पक्ष के अर्थ अपने वेदभाष्यों में किये है उन्हें वे भ्रान्त ठहराते हैं।

(3) निर्वचनशास्त्र को भी उनका विशेष योगदान है, यतः अपने वेदभाष्य में तथा उणादिकोष की व्याख्या में उन्होंने अनेक नवीन निर्वाचन प्रस्तुत किये हैं।

(4) वे वैदिक शब्दों को व्यापक अर्थों में लेते हैं। यथा देव शब्द से परमेश्वर, विद्वान्, माता, पिता, आचार्य, अतिथि, ज्ञानेन्द्रिय आदि का ग्रहण करते है। यज्ञ में केवल अग्निहोत्र को ही नहीं, प्रत्युत देवपूजा, संगतिकरण, शिल्प, दान आदि को भी संमिलित करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न वैदिक शब्दों की व्याख्या की गई है।

(5) उनका वेदभाष्य मानव को अभ्युदय तथा निःश्रेयस दोनों की प्राप्ति के लिये उद्‌बोधन देता है। लौकिक उत्कर्ष में वे समग्र भूमण्डल के धर्मपूर्ण चक्रवर्ती राज्य तक पहुंचाते हैं, तो दिव्य उत्कर्ष में मोक्ष के परमानन्द तक ले जाते हैं।

वस्तुतः वेद विश्ववारा प्रथमा संस्कृति एवं भारतीय विचारधारा के आधारभूत स्तम्भ हैं। वेदों की रचना–शैली बड़ी अद्‌भुत है। एक–एक ऋचा अनेक अर्थों का प्रतिपादन करती है। जिस प्रकार उससे आध्यात्मिक रहस्यों का ज्ञान प्राप्त होता है,

उसी प्रकार उससे आधिभौतिक तथा आधिदैविक सत्य भी प्राप्त होता है। ऋषि दयानन्द ने वेदों की इस अद्‌भुत और अनन्त रत्नगर्भा निधि को उसपर पड़ी हुई धूलि और गर्द–गुबार को झाड़–पोंछकर विशुद्ध रूप में हमारे सामने प्रस्तुत किया।

वर्तमान काल के सुप्रसिद्ध दाक्षिणात्य विद्वान् और योगी श्री माधव पुण्डलीक पण्डित ने वेदों के सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द के दृष्टिकोण तथा उनके वेदभाष्य के महत्त्व की चर्चा करते हुए लिखा है–'गत शताब्दी के मध्य में वेदों को पुनः भारत के राष्ट्रिय जीवन में सर्वोत्कृष्ट रूप से प्रतिष्ठापित करने के लिए भारतीय संस्कृति के प्रवल पोषक स्वामी दयानन्द सरस्वती के रूप में प्राप्त हुए। उन्होंने ज्योतिर्मय वेदों के सम्बन्ध में प्रान्तियों और पक्षपातपूर्ण पाश्चात्य विचारधारा का प्रत्यायन करके प्रत्येक भारतीय को प्रेरणा की कि वह सत्य को सीधा देखने का प्रयत्न करे और इस बात को पहचाने कि वेद वस्तुतः ईश्वरीय ज्ञान है। उसने अकाटप प्रमाणों से इस बात को सिद्ध किया कि वेदों में एक ईश्वर का विचार अत्यन्त स्पष्ट रूप में प्रतिपादित किया गया है। अन्य देव तो उसके गुणों तथा शक्ति के सूचक नाममात्र है।'

स्वामी दयानन्द के वेदों में विज्ञानविषयक मन्तव्य का विवेचन करते हुए श्री अरविन्द ने अपने निबन्ध 'Dayanand and the Veda' में लिखा है–"दयानन्द की इस धारणा में कि वेद में धर्म और विज्ञान दोनों की सच्चाइयां पाई जाती हैं, कोई उपहासास्पद या कल्पनामूलक बात नहीं है। मैं इसके साथ अपनी भी धारणा जोड़ देना चाहता हूँ कि वेदों में विज्ञान की वे सच्चाइयाँ भी हैं जिन्हें आधुनिक विज्ञान अभी तक नहीं जान पाया है। ऐसी अवस्था में स्वामी दयानन्द ने वैदिक ज्ञान की गहराई के सम्बन्ध में अतिशयोक्ति से नहीं, अपितु न्यूनोक्ति से ही काम लिया है। श्री अरविन्द का यह भी कहना है– कि ''वेदों का अन्तिम तथा सम्पूर्ण भाष्य चाहे कुछ भी हो, ऋषि दयानन्द वेदों के यथार्थस्वरूप के प्रथम अन्वेषक के रूप में सदा प्रतिष्ठित रहेंगे। समय ने जिनको बन्द कर रक्खा था, ऐसे द्वारों की चाबी को उन्होंने पा लिया और उनमें बन्द स्रोत की सील (मुहर) को तोड़कर फेंक दिया।"

इस प्रकार अनेक नवीनताओं एवं विशेषताओं के कारण स्वामी दयानन्द का वेदभाष्य अत्यन्त उपादेय है।

अंग्रेजी नववर्ष

हवा लगी पश्चिम की, सारे कुप्पा बनकर फूल गए।
ईस्वी सन् तो याद रहा, अपना संवत्सर भूल गए।।
चारों तरफ नए साल का, ऐसा मचा है हो-हल्ला।
बेगानी शादी में नाचे जैसे कोई दीवाना अब्दुल्ला।।

धरती ठिठुर रही सर्दी से, घना कुहासा छाया है।
कैसा ये नववर्ष है, जिससे सूरज भी शरमाया है।।
सूनी है पेड़ों की डालें, फूल नहीं हैं उपवन में।
पर्वत ढके बर्फ से सारे, रंग कहां है जीवन में।।

बाट जोह रही सारी प्रकृति, आतुरता से फागुन का।
जैसे रस्ता देख रही हो, सजनी अपने साजन का।।
अभी ना उल्लासित हो इतने, आई अभी बहार नहीं।
अपना नववर्ष मनाएंगे, न्यू ईयर हमें स्वीकार नहीं।।

लिए बहारें आँचल में, जब चैत्र प्रतिपदा आएगी।
फूलों का श्रृंगार करके, धरती दुल्हन बन जाएगी।।
मौसम बड़ा सुहाना होगा, दिल सबके खिल जाएँगे।
झूमेंगी फसलें खेतों में, हम गीत खुशी के गाएँगे।।

उठो खुद को पहचानो,
यूँ कब तक सोते रहोगे तुम।
चिह्न गुलामी के कंधों पर,
कब तक ढोते रहोगे तुम।।
अपनी समृद्ध परंपराओं का,
आओ मिलकर मान बढ़ाएंगे।
आर्यावृत के वासी हैं हम,
अब अपना ही नववर्ष मनाएंगे।।

ऋषि दयानन्द क्या चाहते थे ?

-मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द महाभारत के बाद विगत लगभग पांच हजार वर्षों में वेदों के मंत्रों के सत्य अर्थों को जानने वाले व उनके आर्ष व्याकरणानुसार सत्य, यथार्थ तथा व्यवहारिक अर्थ करने वाले ऋषि हुए हैं। महाभारत के बाद ऐसा कोई विद्वान नहीं हुआ है जिसने वेदों के सत्य, यथार्थ तथा महर्षि यास्क के निरुक्त ग्रन्थ के अनुरूप व्यवहारिक, उपयोगी, कल्याणकारी एवं ज्ञान–विज्ञान के अनुरूप अर्थ किये हों। वेदों का यथार्थ ज्ञान हो जाने पर मनुष्य को ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति के सत्य रहस्यों व ज्ञान–विज्ञान से परिचय हो जाता है।

ऋषि दयानन्द से पूर्व उन जैसा वेदों का विद्वान व प्रचारक न होने के कारण विगत पांच हजार वर्षों से मनुष्य ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप के विषय में शंकित व भ्रमित था। इस बीच बड़ी संख्या में मत–मतान्तर उत्पन्न हुए परन्तु वह वेद, दर्शन व उपनिषदों के होते हुए भी ईश्वर के सत्यस्वरूप को लेकर भ्रमित रहे। सभी मतों के आचार्यों में विवेक का अभाव प्रतीत होता है अन्यथा वह जड़ पूजा, मिथ्या पूजा व मूर्तिपूजा का विरोध व खण्डन अवश्य करते और जनसामान्य को बताते कि ईश्वर सच्चिदानन्द एवं निराकार आदि गुणों वाला है और उसकी प्राप्ति वा साक्षात्कार उस सर्वव्यापक एवं सर्वान्तर्यामी सत्ता की उपासना व ध्यान करने सहित स्तुति, प्रार्थना व उपासना के माध्यम से ही की जा सकती है।

महर्षि दयानन्द क्या चाहते थे? इसके उत्तर में यह कह सकते हैं कि वह संसार को ईश्वर, जीवात्मा तथा प्रकृति का सत्यस्वरूप बताना चाहते थे, जो सृष्टि के आरम्भ में सर्वव्यापक ईश्वर ने अपने ज्ञान वेदों के द्वारा अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा को दिया था। ऋषि दयानन्द ने ईश्वर व जीवात्मा विषयक वेदों के समस्त ज्ञान को अपने प्रयत्नों से प्राप्त किया था और इतिहास में पहली बार इसे सरल लोकभाषा हिन्दी सहित संस्कृत में देश–देशान्तर में पहुंचाया।

ईश्वरीय ज्ञान ''वेद'' सब सत्य विद्याओं का ग्रन्थ है। इस कारण वह इसे सभी देशवासियों सहित विश्व के लोगों तक पहुंचाना चाहते थे, जिससे वह वेदों का आचरण कर मनुष्य जीवन के पुरुषार्थ एवं उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त हो सकें। वह इस कार्य में आंशिक रूप से सफल भी हुए। आज इसका प्रभाव समस्त विश्व पर देखा जा सकता है। इसी कार्य के लिये ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। इस कार्य को सम्पादित करने के लिये उन्होंने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया, जिनमें ऋग्वेद (आंशिक) तथा यजुर्वेद के संस्कृत व हिन्दी भाष्य सहित सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, संस्कार विधि, पंचमहायज्ञ विधि, आर्याभिविनय, व्यवहार–भानु, गोकरूणानिधि आदि ग्रन्थ हैं। देश व विश्व के लोग ईश्वर व आत्मा के सत्यस्वरूप तथा गुण–कर्म–स्वभाव को जानें और सही विधि से ईश्वरोपासना करें, इसके लिये उन्होंने पंचमहायज्ञ विधि लिखी, जिसमें उन्होंने प्रातः व सायं ध्यान विधि से ईश्वर की उपासना की विधि **''सन्ध्या''** के नाम से प्रस्तुत की है। ईश्वर का ध्यान करने की यही विधि सर्वोत्तम है। इसका ज्ञान सभी उपासना पद्धतियों सहित सन्ध्या का अध्ययन करने से होता

है। अतीत में अनेक पौराणिक विद्वानों ने भी अपनी सन्ध्या व उपासना पद्धतियों को छोड़कर ऋषि दयानन्द लिखित संन्ध्या पद्धति की शरण ली है। पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी ने अपनी आत्मकथा में इसका उल्लेख करते हुए बताया है कि काशी में जिस उच्चकोटि के विद्वान पं. देवनारायण तिवारी जी से वह पढ़ते थे, उन्होंने यह जाने बिना की पुस्तक किसकी लिखी हुई है, इसे सर्वोत्तम जानकर इसी विधि से उपासना करना आरम्भ कर दिया था। बाद में जब उन्हें यह पता चला कि वह सन्ध्या की पुस्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने लिखी है तो उन्हें ऋषि दयानन्द की विद्वता को जानकर सुखद आश्चर्य हुआ था।

महर्षि दयानन्द ने 10 अप्रैल, सन् 1875 को मुम्बई नगरी में आर्यसमाज की स्थापना की थी। इसके बाद लाहौर में आर्यसमाज के 10 नियम बनाये गये, जिनमें से आठवां नियम है **'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।'** हम इससे पूर्व किसी संस्था व देश के संविधान में इस नियम का विधान नहीं पाते। यह नियम ऐसा नियम है कि जो समाज व देश इस नियम को अपना ले, वह ज्ञान व विज्ञान में शिखर स्थान प्राप्त कर सकता है। **आश्चर्य है कि हमारे देश में इसे अब तक लागू नहीं किया जा सका।** ऋषि दयानन्द अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में देश के सभी बालक व बालिकाओं के लिये वेदानुमोदित शास्त्रीय व ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा का विधान करते हैं। वह लिखते हैं कि शिक्षा व विद्या देश के सभी बालक व बालिकाओं को निःशुल्क व समान रूप से मिलनी चाहिये। वैदिक शिक्षा में बच्चों को गुरुकुल में रहकर शिक्षा प्राप्त करनी होती है।

राजा हो या रंक, सबको शिक्षा का अधिकार है, इसका विधान ऋषि दयानन्द ने किया है। उन्होंने यह भी लिखा है कि किसी भी विद्यार्थी के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिये। सबको समान रूप से वस्त्र, भोजन एवं अन्य सभी सुविधायें मिलनी चाहियें। यह भी कहा है कि शिक्षा सभी बालक व बालिकाओं के लिये अनिवार्य होनी चाहिये। जो माता–पिता अपने बच्चों को गुरुकुल, पाठशाला व विद्यालयों में न भेजें, वह दण्डनीय होने चाहिये।

मनुष्य जब ईश्वर व जीवात्मा के विषय को यथार्थ रूप में जान लेता है, तब वह सभी प्रकार के अज्ञान व अन्धविश्वासों सहित मिथ्या परम्पराओं से भी परिचित होकर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करता है। **जन्मना जातिवाद पर भी ऋषि दयानन्द ने प्रहार किया है। जन्मना जाति व्यवस्था को ऋषि दयानन्द ने मरण व्यवस्था की संज्ञा वा उपमा दी थी। वह इस व्यवस्था से दुःखी थे।** उन्होंने वेदों के ज्ञान व अपने विवेक से युवक व युवती के विवाह का विधान कर उनके गुण, कर्म व स्वभाव की समानता व अनुकूलता पर बल दिया है। वह बेमेल विवाह व बाल विवाह के विरोधी थे। वह इन्हें वेद विरुद्ध एवं देश व समाज की उन्नति में बाधक मानते थे। ऋषि दयानन्द ने युवावस्था की विधवाओं व विधुरों का विरोध नहीं किया। यद्यपि वह सभी प्रकार के पुनर्विवाहों को उचित नहीं मानते थे परन्तु आर्यसमाज इसे आपदधर्म के रूप में स्वीकार करता है। वेद में भी विधवा स्त्री के पुनर्विवाह का विधान है। सभी सामाजिक परम्पराओं पर महर्षि दयानन्द की विचारधारा प्रकाश डालती है।

ऋषि दयानन्द देश में स्वराज्य देखना चाहते थे। इस विषय में उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश में स्वदेशीय राज्य को सर्वोपरि उत्तम बताया है और कहा है कि मत–मतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं हो सकता। उनके इन विचारों के परिणामस्वरूप कालान्तर में देश में आजादी के लिये गरम व नरम विचारधारायें सामने आयीं। देश की आजादी के आन्दोलन में सबसे अधिक योगदान भी आर्यसमाज ने ही किया। **आर्यसमाज ने देश की आर्य हिन्दू जाति को धर्मान्तरण से बचाया। आर्यसमाज की वैदिक विचारधारा का प्रचार होने से सभी मत–**

मतान्तरों के विज्ञ व विवेकशील लोगों ने इसे विद्यमान अन्य मतों की विचारधारा से उत्तम जानकर कुछ ने इसे अपनाया भी।

इसका परिणाम यह हुआ कि विश्व इतिहास में पहली बार वैदिक सनातन धर्म से इतर मतों के विज्ञजनों ने वैदिक विचारधारा वा वैदिक धर्म को स्वीकार किया और ऋषि के अनुयायियों वा आर्यसमाज ने उन्हें अपने धर्म में सम्मिलित किया। आज भी ऐसी घटनायें होती रहती हैं। ऋषि दयानन्द की विचारधारा मांसाहार की विरोधी एवं शुद्ध अन्न व भोजन का सेवन करने की पोषक है। मनुष्य का भोजन अन्न, शाक–सब्जी, फल एवं दुग्ध आदि ही हैं। इनके सेवन से मनुष्य निरोग रहते हुए लम्बी आयु को प्राप्त करता है।

मांसाहार अनेक रोगों को आमन्त्रण देता है। मांसाहार ईश्वर प्राप्ति में बाधक है और मांसाहार हिंसायुक्त कर्म व अभक्ष्य होने सहित वेदों में इसकी आज्ञा न होने के कारण जन्म–जन्मान्तर में इसका परिणाम दुःख पाना होता है। आर्यसमाज ने वायु–वृष्टि जल के शोधक व आरोग्यकारक अग्निहोत्र यज्ञ का भी प्रचार किया, जिससे असंख्य प्राणियों को सुख लाभ होने से पुण्यार्जन होता है और हमारा यह जन्म व परजन्म सुख व कल्याण से पूरित होता है।

महर्षि दयानन्द का मुख्य उद्देश्य संसार से अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि करने सहित विद्या के ग्रन्थ वेदों सहित ज्ञान व विज्ञान को प्रतिष्ठित व प्रचारित करना था। वेद की किसी भी मान्यता का ज्ञान व विज्ञान से विरोध नहीं है। वस्तुस्थिति यह है कि वेदों की सभी मान्यतायें ज्ञान–विज्ञान की पोषक हैं। ऋषि दयानन्द की दृष्टि में वेद और वेदानुकूल मान्यतायें सत्याचरण का पर्याय हैं और यही वास्तविक विश्व के मनुष्यों का धर्म हैं। सभी को ईश्वर प्रदत्त मानवमात्र व प्राणीमात्र के हितकारी वेदमत का ही अनुसरण करना चाहिये। यही ऋषि दयानन्द को अभीष्ट था। इसी से विश्व में सुख व शान्ति का वातावरण बनाने में सहायता मिल सकती है व शान्ति का वातावरण बन सकता है।

!! ओ३म् शम् !!

सर्व श्री दीप चन्द विजय कुमार,
कीरतपुर, जिला बिजनौर (उ.प्र.), मो. 9837444469

दीप कोल्ड स्टोर,
कीरतपुर, जिला बिजनौर (उ.प्र.), मो. 9457438575

दीप मार्बल्स,
कीरतपुर, जिला बिजनौर (उ.प्र.), मो. 9412468691

वेदों का स्वाध्याय सभी मनुष्यों का मुख्य कर्तव्य एवं परमधर्म है

-मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्यों के अनेक कर्तव्यों में से एक कर्तव्य वेदों के सत्यस्वरूप को जानना व उनका नियमित स्वाध्याय करना है। **वेदों का स्वाध्याय मनुष्य का कर्तव्य इसलिये है कि वेद संसार का सबसे पुराना व प्रथम ज्ञान है। यह वेदज्ञान मनुष्यों द्वारा अपने पुरुषार्थ से अर्जित ज्ञान नहीं है अपितु सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न आदिऋषियों को सर्वव्यापक ईश्वर से प्राप्त ज्ञान है, जिसे ईश्वर ने चार ऋषियों–अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को उनके हृदय स्थित चेतन–आत्मा में प्रेरणा के द्वारा दिया।**

अध्ययन करने पर पुष्टि होती है कि वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है। इसके लिये ऋषि दयानन्द ने **'सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ'** में विस्तृत तर्क व युक्तियां दी हैं। इनका अध्ययन करने पर यह निश्चित होता है कि वेद मनुष्य की रचना नहीं अपितु ईश्वरीय ज्ञान है और जो ऋषि दयानन्द ने वेद ज्ञान के आविर्भाव के विषय में कहा है, वह सर्वथा सत्य एवं प्रामाणिक है। सृष्टि की रचना अनादि व नित्य, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ एवं सर्वान्तर्यामी सत्ता परमात्मा ने सृष्टि में विद्यमान असंख्य वा अनन्त जीवों को सुख व बन्धनों से मुक्त कर आनन्द से परिपूर्ण मोक्ष प्रदान करने के लिये की है। परमात्मा ज्ञानस्वरूप है। वह सर्वज्ञ है। वह सृष्टि व ज्ञान विषयक प्रत्येक बात को सूक्ष्मता, व्यापकता व समग्रता से जानता है। उसका ज्ञान नैमित्तिक नहीं अपितु नित्य एवं अनादि है।

हमारी यह जो सृष्टि दृष्टिगोचर होती है, यह प्रवाह से अनादि है। ईश्वर इससे पूर्व अनन्त बार ऐसी सृष्टि की रचना कर चुके हैं और भविष्य में भी परमात्मा द्वारा इसी प्रकार से सृष्टि रचना व प्रलय का चक्र जारी रहेगा। ईश्वर द्वारा सृष्टि बनाने और अल्पज्ञान व अल्प बलयुक्त जीवों को सृष्टि की आदि काल में वेदों का ज्ञान देना उसका कर्तव्य निश्चित होता है।

यदि ईश्वर आदि सृष्टि में ऋषियों के द्वारा मनुष्यों को ज्ञान न देता तो मनुष्य भाषा आदि का स्वमेव निर्माण न करने के कारण अद्यावधि अज्ञानी रहते। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी से घड़ा बनाता है परन्तु मिट्टी को वह नहीं बनाता और न बना सकता है। उसी प्रकार मनुष्य ईश्वर प्रदत्त भाषा **'वेदों की संस्कृत'** में विकार कर नई भाषा तो बना सकता है परन्तु आदि भाषा 'वैदिक संस्कृत', उसकी वर्णमाला, शब्द व पद तथा व्याकरण नियमों में निबद्ध भाषा को नहीं बना सकता। ईश्वर का कर्तव्य था कि वह सभी जीवों को जो मनुष्य व इतर योनियों में अपने पाप–पुण्य कर्मों का फल भोग रहे हैं, सृष्टि के आरम्भ काल से उन्हें भाषा व संसार में दुःखों से बचने व आनन्द की प्राप्ति का ज्ञान प्रदान करता, जिससे वह अपना जीवन सुगमता से व्यतीत कर सकें। ईश्वर ने वस्तुतः ऐसा किया भी है। वेद ईश्वर प्रदत्त वही ज्ञान ही है।

मनुष्य का आत्मा चेतन पदार्थ है, जिसमें ज्ञान ग्रहण करने तथा उसके अनुकूल व विपरीत कर्म करने की क्षमता है। ज्ञान से मनुष्य की उन्नति होकर उसे सुख प्राप्त होता है। अज्ञानी मनुष्य दुःख उठाता है और ज्ञानी मनुष्यों को देखकर स्वयं भी उनके जैसा बनना चाहता है। यह स्वाभाविक व प्राकृतिक प्रवृत्ति है। वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान होने से सर्वांश में सत्य एवं मनुष्यों के जानने योग्य व आचरण करने के योग्य है। वेदों का अध्ययन करने से ईश्वर, जीवात्मा तथा सृष्टि का ज्ञान होने सहित मनुष्यों को अपनी उन्नति करने की प्रेरणायें प्राप्त होती है। **मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष है। मोक्ष दुःखों की सर्वथा निवृत्ति को कहते हैं**

और मोक्ष अवस्था प्राप्त होने पर वेद व ऋषियों के ग्रन्थों से इस पर जो प्रकाश पड़ता है, उसके अनुसार मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर जन्म व मरण के दुःख व सुखरूपी बन्धनों से मुक्त होकर पूर्ण आनन्द की अवस्था को प्राप्त होता है।

इसका रहस्य यह है कि ईश्वर आनन्दस्वरूप है जो कि दुःखों से सर्वथा रहित है। मोक्ष में जीवात्मा को ईश्वर का सान्निध्य, संगति व व्यापक –व्याप्य सम्बन्ध बना रहता है, जिससे ईश्वर का आनन्द व ज्ञान जीवात्मा को सुलभ होने से वह पूर्ण आनन्द की अवस्था में रहता है। अतः वेदों से मोक्ष प्राप्ति की प्रेरणा व मोक्ष को प्राप्त करने के साधन यथा ईश्वर का ज्ञान, उसकी उपासना, सद्कर्म, परोपकार, देश व समाज की सेवा, यम–नियम–आसन– प्राणायाम –प्रत्याहार–धारणा–ध्यान व समाधि द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार कर जीवात्मा जन्म–मरण से मुक्त हो जाता है। इस मोक्ष की स्थिति को प्राप्त करने के लिये ही सृष्टि के आरम्भ से हमारे सभी ऋषि–मुनि–योगी आदि वेदानुकूल सत्कर्मों को करके मोक्ष की प्राप्ति में सचेष्ट, सावधान व प्रयत्नरत रहते थे। यह वेदज्ञान ही ईश्वर की मनुष्यों को सबसे बड़ी देन कही जा सकती है।

वेदों का अध्ययन इस लिये करना भी आवश्यक है कि इससे हम अपनी आत्मा व इसके सत्यस्वरुप को यथार्थ रूप में जानने के साथ अपने अनादि–अनन्त माता–पिता व सृष्टिकर्ता को भी तत्वतः अर्थात् उसके यथार्थरूप में जान पाते हैं। वेदों के बिना ईश्वर, जीवात्मा और सृष्टि के यथार्थ स्वरूप को नहीं जाना जा सकता। यदि हम ईश्वर और जीवात्मा आदि को यथार्थस्वरूप में नहीं जानेंगे तो हमें ईश्वर की उपासना के महत्व व उसकी विधि का ज्ञान नहीं होगा, जिससे हम इनसे होने वाले नाना प्रकार के लाभों व सुखों से वंचित हो जायेंगे। इसलिये भी वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन करना प्रत्येक मनुष्य के लिए अत्यावश्यक है। वेदों का अध्ययन करने से हमें अग्निहोत्र–यज्ञ के स्वरूप तथा उसकी विधि का ज्ञान भी होता है। यज्ञ से मनुष्य अनजाने में होने वाले पापों से मुक्त होता है।

यदि मनुष्य यज्ञ–अग्निहोत्र नहीं करेगा तो वह श्वास–प्रश्वास आदि से होने वाले वायु प्रदूषण सहित चूल्हे व चौके से होने वाले सूक्ष्म प्राणियों को दुःखों व प्रदूषण आदि से संबंधित पापों का निदान भी नहीं कर पायेगा। अन्य भी अनेक लाभ यज्ञ करने से होते हैं। वायु व वर्षा जल की शुद्धि से कृषि कार्यों को करके उत्तम अन्न की प्राप्ति यज्ञ–अग्निहोत्र से होती है। यज्ञ स्वास्थ्यवर्धक, रोगमुक्त करने सहित दीर्घायु प्रदान करने वाला होता है। यज्ञ से जड़ व चेतन देवों की पूजा सहित संगतिकरण एवं दान भी साथ–साथ होता है। यज्ञ अग्निहोत्र का स्वरूप तो अल्प होता है परन्तु उससे लाभ अनेक होते हैं जिससे हमें जन्म–जन्मान्तरों में अनेक सुखों की उपलब्धि होती है। यज्ञ विषयक अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है, जिसमें **'यज्ञ–मीमांसा'** ग्रन्थ अत्यन्त लाभकारी है। यह ग्रन्थ वेदाचार्य आचार्य डॉ. रामनाथ वेदालंकार द्वारा रचित है, जिसमें यज्ञ के प्रायः सभी पहलुओं पर सारगर्भित प्रकाश डाला गया है।

वेदाध्ययन करने से हम सृष्टि विषयक यथार्थ ज्ञान को प्राप्त होते हैं, जिससे हम परजन्मों में पशु–पक्षियों आदि नीच योनियों में जन्म लेकर उनमें होने वाले दुःखों से बच जाते हैं। यदि हम वेदाध्ययन नहीं करेंगे, तो हमें अपने कर्तव्य–अकर्तव्यों का ज्ञान नहीं होगा। ऐसी स्थिति में हम जो कर्म करेंगे, उनका परिणाम परजन्म में नीच क्षुद्र दुःखों से पूरित योनियों में हमारा जन्म हो सकता है। जब हम वेद और ऋषियों के सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित दर्शन एवं उपनिषद आदि ग्रन्थों को पढ़ते हैं, तो यह हमारा शुभ कर्म होता है। जिसका परिणाम सुख व उन्नति के रूप में प्राप्त होता है। वेदाध्ययन करने से हमारा ईश्वर प्रदत्त वैदिक–सत्य–धर्म वर्तमान एवं भावी युगो में भी सुरक्षित रहेगा, जिससे कोटि–कोटि मनुष्यों को कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध होकर लाभ प्राप्त होगा।

वेदाध्ययन से सात्विक प्रवृत्तियों का विस्तार होने सहित आसुरी प्रवृत्ति के विस्तार में बाधा उत्पन्न होगी। इससे मानव जाति को लाभ होगा अन्यथा आसुरी प्रवृत्तियों में वृद्धि से समाज व देश में अनेक हिंसात्मक प्रवृत्तियों में वृद्धि होकर सज्जन पुरुषों को अनेकानेक दुःख प्राप्त हो सकते हैं। वेदाध्ययन व इसकी प्रवृत्ति का एक लाभ यह भी होगा कि लोग ईश्वर के स्वरूप व उपासना को जानकर ध्यान व समाधि प्राप्त करके ईश्वर का साक्षात्कार कर सकेंगे। यज्ञ आदि करके वायु व जल आदि की शुद्धि से संसार में सुखों की वृद्धि व रोगों का शमन होगा। लोग धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष की प्राप्ति में कृतकार्य हो सकते हैं। वैदिक धर्म व संस्कृति का एक प्रमुख लाभ यह भी है कि इसमें लोग परस्पर सुख–दुःख बांटते हैं और किसी को विपत्ति व दुःख आ जाये तो तन–मन–धन से उसकी सहायता करते हैं। वेदाध्ययन से मनुष्य कर्म के महत्व को जानकर पाप कर्मों को करने से स्वयं को रोकेंगे। इससे वह दुःखों से बचेंगे और इसके प्रचार से अन्य सभी मनुष्यों को भी लाभ होगा।

आधुनिक युग में ऋषि दयानन्द सरस्वती (1825–1883) ने विलुप्त वेद और वेदज्ञान का पुनरुद्धार किया है। उन्होंने यजुर्वेद सम्पूर्ण तथा ऋग्वेद का आंशिक संस्कृत हिन्दी में भाष्य व भाषानुवाद भी किया है। अनेक आर्य विद्वानों ने भी ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य पद्धति का अनुसरण करके अवशिष्ट तथा सभी वेदों पर हिन्दी में भाष्य किये हैं। ऋषि दयानन्द ने वेद विषयक ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका की रचना करने के साथ एक प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की रचना भी की है। इस ग्रन्थ से वेदों का महत्व तथा वैदिक मान्यताओं, विचारधाराओं तथा सिद्धान्तों को समझने में सहायता मिलती है। सत्यार्थप्रकाश धर्म ग्रन्थ जैसा विश्व साहित्य में अन्य ग्रन्थ नहीं है। जिस मनुष्य द्वारा इसे पढ़ा जाता है उसका जीवन धन्य हो जाता है। इसे पढ़ने से पूर्व स्वयं को सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त रखना पड़ता है, तभी इस ग्रन्थ का लाभ होता है।

ऋषि दयानन्द जी ने इन ग्रन्थों सहित संस्कार विधि, आर्याभिविनय एवं अन्य अनेक वेद व्याकरण आदि वेदांग प्रकाश ग्रन्थों की भी रचना की है। यह सब वेदों के सत्य ज्ञान का प्रकाश करने कराने में सहायक एवं आवश्यक हैं। ऋषि दयानन्द के यह सभी ग्रन्थ वेदाध्ययन एवं मनुष्यमात्र का कल्याण करने में उनकी सबसे उत्तम देन हैं। संसार की अन्य सब सम्पत्तियां इन ग्रन्थों के सम्मुख तुच्छ हैं। वैदिक स्कालर पं. गुरुदत्त विद्यार्थी ने सत्यार्थप्रकाश को 18 बार पढ़कर कहा था कि इसे बार–बार पढ़ने पर नये–नये अर्थों का बोध होता है। यह ग्रन्थ इतना महत्वपूर्ण है कि यदि इसके लिए उन्हें अपनी सारी सम्पत्ति भी बेचनी पड़ती तो वह उसे बेचकर सत्यार्थप्रकाश को क्रय करते। सौभाग्यवश सत्यार्थप्रकाश के दो संस्करण उपलब्ध हैं। एक सन् 1875 में प्रकाशित आदिम सत्यार्थप्रकाश एवं दूसरा सन् 1884 में प्रकाशित संशोधित संस्करण। दोनों ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। ऋषि दयानन्द जी के सभी ग्रन्थों का अध्ययन कर वेदाध्ययन से होने वाले सभी लाभों को प्राप्त किया जा सकता है। स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, महात्मा हंसराज तथा स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जी आदि का जीवन इस ग्रन्थ को पढ़कर ही बना था। हम अपनी बुद्धि के अनुसार वेदाध्ययन के महत्व व लाभों के बारे में लिख चुके हैं। पाठकों को वेदाध्ययन कर लाभान्वित होना चाहिये।

!! ओ३म् शम् !!

'धर्म'	***'दस्यु'***
*जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपातरहित न्याय सर्वाहित करना है, जो कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिये यही एक मानने योग्य है, उसको **'धर्म'** कहते हैं।*	*अनार्य अर्थात् जो अनाड़ी आर्यों के स्वभाव और निवास से पृथक् अर्थात् जिनका स्वभाव आर्यों के स्वभाव के विपरीत होता है। डाकू, चोर, हिंसक जो कि दुष्ट मनुष्य है, वह **'दस्यु'** कहाता है।*

(प्रभु वर्णन)
प्रभु का स्वरूप

– प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरेस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः।।५।।

अन्वयार्थः (तत् एजति) वह गति करता है, (तत् न एजति) वह गति नहीं करता है। तात्पर्य यह है कि वह मुढ़ों की दृष्टि में गति करता है, परन्तु वास्तव में वह गति नहीं करता। अथवा वह अन्य सबको (एजति–एजयति) गति देता है, पर स्वयं वह गति नहीं करता। या यों भी कहा जा सकता है कि वह विभुरूप से गतिमान् है पर एक देशी पदार्थ की तरह वह गति नहीं करता। (तत् दूरे) वह दूर है, (तत् उ अन्तिके) वह समीप भी है। तात्पर्य यह है कि अविवेकी–अज्ञानी–अधर्मात्माओं से वह सदा दूर रहता है और विवेकी–ज्ञानी–धर्मात्माओं के वह सदा समीप रहता है। (तत् अस्य सर्वस्य अन्तः) वह इस सब चर–अचरजगत् के भीतर सदा वर्तमान रहता है, और (तत् उ अस्य सर्वस्य बाह्यतः) वह ही इस सब चर–अचरजगत् के बाहर भी सदा विद्यमान रहता है।

वह प्रभु गति करता है, और वह गति नहीं करता, वह दूर है और वह समीप भी है, वह सबके भीतर है और वह ही सब के बाहर भी है।

उपर्युक्त मन्त्र में विरोधाभास–अलंकार है। विरोधाभाष अलंकार वह अलंकार होता है, जहाँ वास्तव में विरोध तो न हो, परन्तु फिर भी वह विरोध प्रतीत होता है।

वह गति करता है और वह गति नहीं करता, इस विरोध का परिहार करते हुए कई विद्वानों का कहना यह है कि पूर्व 'एजति' को णिजन्त 'एजयति' मानकर अर्थ किया जाए तो उस अवस्था में इसका यह अर्थ होगा कि 'वह सब को गति देता है पर वह स्वयं गति में नहीं आता है।'' यों तो यह एक सुन्दर और सुसंगत अर्थ है, परन्तु विद्या मार्तण्ड श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी का कहना यह है कि– ''यह अर्थ भले ही अच्छा और सुसंगत क्यों न प्रतीत होता हो, पर वास्तव में यह अर्थ मूलमन्त्र के आशय के विपरीत है। अतः यह ठीक नहीं है, क्योंकि मन्त्र में तो परस्पर विरोधी आशय में तीन विचार दिये गये हैं। 'तत् एजति' 'तत् न एजति' 'तत् दूरे' 'तत् उ अन्तिके' 'तत् अस्य सर्वस्य अन्तः' 'तद् अस्य सर्वस्य बाह्यतः'। अर्थात् वह गति करता है, वह गति नहीं करता है, वह दूर है और वह पास भी है तथा वह इस सबके भीतर है और वह ही इस सबके बाहर भी है।''

अब उपर्युक्त मन्त्र में जो विरोध प्रतीत होता है, वह वस्तुतः विरोध नहीं है। फिर भी हमें वह विरोध लगता है, इसलिए कि हम उसका आशय नहीं समझ पा रहे हैं या उसकी संगति नहीं लगा पा रहे हैं। यदि हम इन वाक्यों पर गम्भीरता से विचार करें तो सहज ही इनकी संगति भी लग जायेगी और तब ये वाक्य हृदयंगम भी हो जायेंगे।

वह परमेश्वर विभु है, सर्वव्यापक है। अतः वह गति करता है, वह गति नहीं करता, इस वाक्य का अभिप्राय यह है कि उसकी सर्वत्र विभुगति होती है, एक देशीय पदार्थ के समान उसकी गति कभी नहीं होती। वह दूर है और वह पास भी है, इसका अभिप्राय यह है कि सर्वव्यापक होने से वह दूर और समीप से समीप भी है। अथवा वह अविवेकी–अज्ञानी अधर्मात्माओं से सदा दूर रहता है और विवेकीज्ञानी धर्मात्माओं के वह सदा समीप रहता है। वह विभु–सर्वव्यापक होने से सब

चर–अचरजगत् के भीतर भी सदा वर्तमान रहता है और बाहर भी सर्वदा विराजमान रहता है।

इस मन्त्र के आधार पर मनुष्यों को चाहिए कि वे यह भली–भाँति समझ लें कि वह परमेश्वर किसी एक देशी पदार्थ के समान गति नहीं करता। वह तो विभु है – व्यापक है। अतः वह विभुरूप से सर्वत्र गतिमान् है। इस प्रकार सर्वत्र गया हुआ वह परमेश्वर समीप से समीप और दूर से दूर तथा इस जड़–चेतन जगत् के भीतर–बाहर सर्वत्र विराजमान रहता है। फिर भी आश्चर्य यह है कि इस महान सर्वव्यापक परमेश्वर का इस मनुष्य को बोध नहीं हो पाता, इस इन्सान को ज्ञान नहीं हो पाता। मन्त्र इस बात को अपने ही ढंग से सुलझाता है।

मन्त्र कहता है कि अगर मनुष्य अपनी तरह के सांसारिक किसी एक देशी पदार्थ के समान विचार करे तो वह परमेश्वर बिल्कुल भी गति नहीं करता, बिल्कुल भी वह (ACTIVE) नहीं रहता है। पर अगर वह मनुष्य उस विभु–सर्वव्यापक परमेश्वर की विभुरूप गति को निहारे वा उस पर तनिक विचार करे तो तब वह उसकी गति–हरकत को भूल जायेगा और सहज ही तब वह दाँतों तले अंगुलि दबा जायेगा और सहज ही वह कह उठेगा कि – वह दूर भी है और पास भी है। वह इस सब चर–अचर जगत् के भीतर भी है और बाहर भी है। इन वाक्यों पर जब वह विचार करेगा तो उसे भली–भाँति यह बोध हो जायेगा, यह ज्ञान हो जायेगा कि सर्वत्र व्यापक परमेश्वर में ये दोनों बातें सहज ही संगत हो जाती हैं। इतने पर भी अगर वह उसको देख नहीं पा रहा है, वह उस परमेश्वर को अनुभव नहीं कर पा रहा है, तो इसका कारण यह है कि उसके पास वह आँख नहीं है जिससे कि उसका बोध होता है, उसके पास वह विवेक नहीं है जिससे कि उसका साक्षात्कार होता है।

जो मनुष्य जब भी इस विषय में जाग गया, सावधान हो गया, तो वह उसी दिन से ही उसे जानने के लिए ज्ञानी–ध्यानी धर्मात्मागुरुओं के सम्पर्क से, जप–तप–संयम, स्वाध्याय, सत्संग, और धारणा–ध्यान आदि में प्रवृत्त हो जायेगा और शनैः शनैः ज्ञानी–ध्यानी–धर्मात्मा–विवेकी बनकर उस प्रभु को वह अपने इतना समीप पा लेगा, वह अपने इतना निकट अनुभव कर लेगा कि फिर उसे सहज ही यह बोध हो जायेगा कि–''जितना समीप मैं अपने धन–दौलत और स्त्री–पुत्र, प्रतिष्ठा को समझता था उस सब स बढ़कर यह मेरे समीप निकला, और यह इतना समीप निकला कि इससे बढकर कोई और समीप सम्भव ही नहीं हो सकता और साथ–साथ उसे तब यह भी पता चल जायेगा कि 'जब तक उस महान् प्रभु का मुझे बोध न था, तब तक वह इतना दूर प्रतीत होता था जितना कि दूर कोई और पदार्थ मानो हो ही नहीं सकता।' उस समय जबकि मनुष्य को उसका भली–भाँति बोध हो जायेगा तो फिर उसे सब में सर्वत्र भीतर–बाहर भी उस प्रभु का ही अनुभव होने लगेगा।

अब, जबकि मनुष्य को, साधक को वह सब के बाहर और सब के भीतर प्रतीत होने लगेगा, अर्थात् जब उसको सब के बाहर, अर्थात् आत्मा–परमात्मा में सब को और उसको सब के भीतर, अर्थात् सब जड़–चेतन पदार्थों में उस आत्मा–परमात्मा को देखने लगेगा, अनुभव करने लगेगा, तभी अगले मन्त्र के आधार पर उस साधक के हृदय में सब के प्रति घृणा–द्वेष समाप्त हो जायेगा, सबके प्रति अपमान और तिरस्कार का व्यवहार समाप्त हो जायेगा। अतः साधक को चाहिए कि वह जप–तप और धारणा–ध्यान आदि के द्वारा उस विवेक को जी–जान से प्राप्त करने का प्रयास करे, जिसके आधार पर यह सब कुछ होता है।

छल-प्रपंच से दूर हो, जन-मंगल की चाह। आत्मनिरोगी जन वही गहे सत्य की राह॥

वेदों का प्रादुर्भाव

– डॉ० महेश कुमार शर्मा

वेद सब सत्य विद्याओं से युक्त ईश्वरीय नित्य व अनादि ज्ञानहै। वेद चार हैं – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। यजुर्वेद और अथर्ववेद के मंत्रों तथा शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से सिद्ध होता है कि सर्वशक्तिमान निराकार परमेश्वर ने वेदों के ज्ञान को सृष्टि के आदि में चार ऋषियों–अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को उपदेश देकर उन मनुष्यों के ज्ञान के बीच में उनके हृदय गुहा में वेदों का प्रकाश कराया था।

अग्नि को ऋग्वेद (ऋचः), वायु को यजुर्वेद (यजुः), आदित्य को सामवेद (सामानि) और अंगिरा को अथर्ववेद (छन्दासि, आंगिरसः) का ज्ञान दिया। वेद ईश्वर द्वारा रचित विद्या है, इसलिए नित्य है। आरंभ में ये किसी मनुष्य या मनुष्य–विशेषों द्वारा की गई कृति नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि चार मुख के ब्रह्माजी और व्यासादि मुनियों ने वेदों को रचा था, जो मानने योग्य नहीं है। श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों और मनु के श्लोकों में प्रमाण हैं कि अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से ब्रह्माजी को वेदों का उपदेश प्राप्त हुआ था। व्यासादि मुनियों का जन्म तो बहुत बाद में हुआ था और उस समय वेदों का ज्ञान पहले से विद्यमान था। वेद शब्द "विद्–ज्ञाने" धातु से निकला है। विद् धातु के अर्थ ज्ञान, सत्त, लाभ और विचार हैं। इसके अर्थ जड़, मूल, सार, बीज और विद्वान मनुष्य भी हैं। वेदों में मुख्यतः मनुष्य के जीवन, मृत्यु और मोक्ष के बारे में मूल ज्ञान का अक्षय भंडार है।

वेद के चार विभाग विज्ञान, कर्म, उपासना और ज्ञान काण्ड के भेद से किये जाते हैं, जो वस्तुतः चार विस्तृत विषय हैं और इनमें अन्य अनेक विषय संगृहीत हो जाते हैं। ऋक् (ऋग्वेद) शब्द का अर्थ है, ईश्वर से लेकर पृथ्वीपर्यन्त सब पदार्थों के गुण–गुणी का ज्ञान। ऋक् शब्द स्तुत्यर्थक ऋच् धातु से बना है। इसका अर्थ पदार्थों का गुण वर्णन अर्थात् उनके सत्यस्वरूप का स्तवन है। ऋग्वेद गुण और गुणी के भेद से पदार्थों का स्तवन करता है। ईश्वर ने ऋग्वेद में गुण और गुणी के विज्ञान के प्रकाश के द्वारा सब पदार्थ प्रसिद्ध किये हैं। ऋग्वेद ज्ञान काण्ड है। इसमें तिनके से लेकर ब्रह्म–पर्यन्त सब पदार्थों का ज्ञान दिया हुआ है। मंत्रों की दृष्टि से ऋग्वेद चारों वेदों में सबसे बृहद है। इसमें सबसे अधिक 10,522 मंत्र हैं।

यजुः (यजुर्वेद) शब्द का अर्थ है, सब क्रिया करना, क्रिया प्रकाश से अविद्या की निवृत्ति, अधर्म में अप्रवृत्ति तथा धर्म और पुरुषार्थ का संयोग करना। यजुः शब्द यज्ञ, देवपूजा, संगतिकरण और दान के अर्थ को देने वाले धातु से निष्पन्न है। यजुर्वेद में कर्मकांड है। इसमें कर्म के विविध प्रकारों का सन्निवेश है। इसमें अनेक यज्ञों का वर्णन है। उन मनुष्यों को पदार्थों से जिस–जिस प्रकार यथायोग्य उपकार लेने के लिए क्रिया करनी चाहिए तथा उस क्रिया के जो–जो अंग या साधन हैं, सो–सो यजुर्वेद में प्रकाशित किये गए हैं। जो कर्मकांड है, सो विज्ञान का निमित्त और जो विज्ञान काण्ड है, सो क्रिया से फल देने वाला होता है। यजुर्वेद में 1,975 मंत्र हैं ।

सामवेद उपासना का वेद है। साम समन्वय और उपासना से सम्बद्ध है। साम में जहां उपासना का उदात्त रूप है, वहाँ उसका बहुत ही वैज्ञानिक ऊहापोह भी है। वह है समन्वय का प्रकार, यह समन्वय कर्म और ज्ञान का, कर्म और उपासना का, जगत् और ब्रह्म, लोक और परलोक आदि सभी का हो सकता है। प्रकृति के साथ, जीव व ब्रह्म के कार्यकलापों का जब तक समन्वय न किया जाए, उपासना की सिद्धि नहीं हो सकती है। सामवेद उपासनात्मक है। सामवेद का विषय आध्यात्मिक दृष्टि से उपासना है अर्थात् समीप बैठकर ध्यानादि द्वारा इष्ट परमेश्वर का चिन्तन। इसके मंत्र गानमय हैं। ये गाये जाते हैं और इन गानों को

सामगान कहा जाता है। छन्दों को गायन की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। सामवेद में गीति व गान के सहस्त्र उपाय हैं। इसमें 1,875 मंत्र हैं। 70 मंत्रों को छोड़कर सामवेद के सभी मंत्र ऋग्वेद के हैं।

अथर्ववेद युद्ध और शांति का वेद है। अथर्ववेद महत्ता का द्योतक है और इसमें ज्ञान का सर्वोच्च प्रकार वर्णित है। यह वेद विज्ञान एवं विविध प्रकार की औषधियों से संबंध रखता है। अथर्ववेद में तप व श्रम की महिमा बताई गई है। तपस्वी व श्रमशील व्यक्ति ही जीने का अधिकार रखते हैं। श्रमविहीन व तपरहित रहन–सहन ही घातक रोगों – जैसे कैंसर, मधुमेह, रक्तचाप, हृदय रोग आदि का एक प्रमुख कारण है। अथर्व का एक अर्थ है, अकम्प यानी जिसे कंपाया, डराया या हिलाया ना जा सके। अथर्ववेद में 5,977 मंत्र हैं। चारों वेदों में कुल 20,349 मंत्र हैं। वेदों में कुछ प्रमुख मंत्रों जैसे विश्वानिदेव, गायत्री मंत्र आदि की पुनरावृत्ति भी है।

परमेश्वर निराकार है और सर्वशक्तिमान व सर्वव्यापक होने से जीवों को अपनी व्याप्ति से वेदविद्या के उपदेश करने में कुछ भी मुख, जिह्वा, ताल्वादि से वर्णोच्चारण की उसे आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर ने जीवों को अन्तर्यामी रूप से उपदेश किया है। जब परमेश्वर निराकार, सर्वव्यापक है तो वह अपनी वेदविद्या का उपदेश जीवस्थ स्वरूप से जीवात्मा में प्रकाशित कर देता है, फिर वह मनुष्य अपने मुख से उच्चारण करके दूसरों को सुनाता है।

परमात्मा ने उन चार महर्षियों ही में वेदों का प्रकाश किया, अन्य में नहीं, क्योंकि वे ही चार सब जीवों से अधिक पवित्रात्मा थे। अन्य उनके सदृश नहीं थे। इसलिये पवित्र विद्या का प्रकाश उन्हीं में किया। सब मनुष्यों के हृदयों में वेदों का प्रकाश न करके केवल उन चार पवित्रात्मा ऋषियों के हृदयों में प्रकाश करने से ईश्वर में पक्षपात का लेश कदापि नहीं आता किन्तु उस न्यायकारी परमात्मा का साक्षात् न्याय ही प्रकाशित होता है क्योंकि न्याय उसको कहते हैं कि जो जैसा कर्म करे उसको वैसा ही फल दिया जाये। जीव, जीवों के कर्म और स्थूल कार्य–जगत् ये तीनों अनादि हैं। जीव और कारण–जगत् स्वरूप से अनादि हैं और कर्म तथा स्थूल कार्य–जगत् प्रवाह से अनादि हैं। वे चार महर्षि सृष्टि के आदि में उत्पन्न होने पर भी और जीव व जीवों के कर्म अनादि होने से, उन पवित्र आत्माओं के पूर्व पुण्य, पूर्वजन्म से आये।

परमेश्वर ने वेदों का प्रकाश संस्कृत भाषा में किया क्योंकि वेद भाषा संस्कृत अन्य सब भाषाओं का कारण है। परमात्मा ने अग्नि आदि ऋषियों को संस्कृत भाषा का ज्ञान कराया और धर्मात्मा योगी महर्षि लोग जब–जब, जिस–जिस वेदमंत्र के अर्थ जानने की इच्छा करके ध्यानावस्थित हो परमेश्वर के स्वरूप में समाधिस्थ हुए, तब–तब परमात्मा ने अभीष्ट मंत्रों के अर्थ जनाये।

सृष्टि के आरंभ में वेदों को रचने व लिखने के लिये लेखनी, स्याही, दवात, कागज, छापाखाना आदि साधन व पदार्थ उपलब्ध नहीं थे, इसलिए महर्षियों, मुनियों, तपस्वियों, श्रेष्ठ मनुष्यों आदि ने सृष्टि के प्रारंभ से सत्य विद्याओं से युक्त वेदों के ज्ञान को सुनते–सुनाते, कंठस्थ व अभ्यास करते हुए उनका प्रचलन किया। इससे वेदों का नाम "श्रुति" पड़ा। आज भी भारत में कई वैदिक विद्वानों को वेद कंठगत हैं। "छन्द", "मन्त्र" और "निगम" भी वेदों के नाम हैं। "छन्द" नाम इसलिए है कि वेद स्वतंत्र, प्रमाण और सत्य विद्याओं से परिपूर्ण है। "मन्त्र" नाम इसलिए है कि वेदों से सत्य विद्याओं का ज्ञान होता है और "निगम" नाम इसलिए है कि वेदों से सब पदार्थों का यथार्थ ज्ञान होता है। वेदों के इन नामों के प्रमाण मनुस्मृति, निरुक्त, शतपथ ब्राह्मण और अष्टाध्यायी में मिलते हैं।

चारों वेदों के चार उपवेद हैं, यथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्व वेद और अर्थवेद। आयुर्वेद, आयु को बनाए रखने का ज्ञान देता है। धनुर्वेद में आत्मरक्षा का ज्ञान भरा पड़ा है। गान्धर्व वेद, भावनाओं पर आधारित संगीत के माध्यम से आत्मा की उदात्त प्रवृत्तियों को परमात्मा के प्रति समर्पित कराने में समर्थ है। अर्थवेद में प्रकृति प्रदत्त साधनों के मानव कल्याण हेतु उपयोग करने का विधि–

विधान है जिससे प्राकृतिक साधनों का उपयोग करते हुए पर्यावरण को अक्षुण रूप से बनाए रखने की व्यवस्था है।

चारों वेदों के चार प्रमुख ब्राह्मण ग्रन्थ हैं– ऐतरेय, शतपथ, ताण्डय और गोपथ। इन ब्राह्मण ग्रंथों में वेदों की व्याख्या है। इनका नाम ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्म जो वेद उसका व्याख्यान ग्रन्थ होने से ब्राह्मण ग्रंथ नाम हुआ। वेद के अंगस्वरूप शास्त्र छः हैं जिन्हें वेदांग कहते हैं– शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त, कल्प, छन्द और ज्योतिष। वेद प्रामाणिक ईश्वरीय शाश्वत सत्य ज्ञान होने के कारण इसमें सृष्टि के आरंभ से कोई परिवर्तन देखने में नहीं आया है। इनमें वैदिक मंत्रों की संख्या न कम हुई है और न ही अधिक। जबकि संसार के अन्य धार्मिक ग्रंथों में यह बात देखने में नहीं आती, उनमें बदलाव नजर आता है। उनमें छेड़छाड़ होती रहती है क्योंकि ये अन्य विभिन्न धर्मों के ग्रन्थ मनुष्यों द्वारा निर्मित हैं।

जैसे सौरमंडल में प्रकाश पुंज सूर्य के प्रकाश में आजतक किसी भी प्रकार की मिलावट नहीं हो सकी। इसी प्रकार परमेश्वर प्रदत्त ज्ञान–भानु वेद में भी कतई किसी प्रकार की मिलावट नहीं की जा सकी। धूर्त व स्वार्थी लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए व अपने स्वामी राजाओं की दुर्बलताओं को धर्मानुकूल ठहराने के लिए अनेक धर्मग्रंथों में मिलावट कर दी। न रामायण बच सकी, न भागवत –पुराण और न ही महाभारत बच पाई। ब्राह्मणग्रंथों व मनुस्मृति में भी प्रक्षेप करके इन्हें दूषित किया गया परन्तु वेद में न कुछ मिलाया जा सका और न कुछ हटाया जा सका।

महर्षि मनुजी ने मनुस्मृति में लिखा है– **"वेदो अखिलो धर्ममूलम्।"** अर्थात् सम्पूर्ण धर्म का आधार वेद है। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने वेद के विषय में आर्यसमाज का तीसरा नियम इस प्रकार प्रतिपादित किया – **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना, सब आर्यों का परम धर्म है।"**

यह निर्विवाद सत्य है कि पढ़ने–पढ़ाने और सुनने–सुनाने से ज्ञान की प्राप्ति होती है। किसी विषय पर सम्पूर्ण आश्चर्य अज्ञान का फल है। वेदमंत्रों के पाठ से मनुष्य के हृदय में उत्साह, उल्लास तथा शान्ति का स्रोत बहता है। बुद्धि में सात्विकता और गंभीरता आती है तथा उसे कर्मशील बनाकर जीवन सफल, सुखी व कल्याणकारी बनाने का मार्ग दिखाता है। प्रभु प्राप्ति में वेद–ज्ञान परम आवश्यक है। मनुष्य कैसे मनुष्य बने, मनुष्य बनकर कैसे परस्पर व्यवहार करे, इसकी उदात्त प्रेरणाएँ वेद की प्रत्येक ऋचा में ध्वनित हैं। इनके स्वाध्याय, मनन व आचरण से मानवता का विकास हुआ है और होता रहेगा। यज्ञमय जीवन के द्वारा प्रेममय प्रभु का साक्षात्कार करने के लिए, हम गति–बल–प्रेरणा पाकर मोक्ष की ओर अग्रसर हों। हमारे जीवन वेदों के निर्देशन में जगन्नियंता परमात्मदेव की गोदी में स्थान पाकर उस प्रकाशपुंज का सामीप्य अनुभव कर सकें, जिसे प्राप्त करने के लिए ही यह मानव देह हमें प्राप्त हुई है।

काम की बात

- शीतल जल में डालकर, सौंफ गला ओ आप। मिश्री के संग पान कर, मिटे दाह–संताप।।
- फटे विमाई या मुंह फटे, त्वचा खुरदुरी होय। नींबू–मिश्रित आंवला, सेवन से सुख होय।।
- सौंफ इलायची गर्मी में, लौंग सर्दी में खाय। त्रिफला सदाबहार है, रोग सदैव हर जाय।।
- वात–पित्त जब बढ़े, पहुंचावे अति कष्ट। सौंठ, आंवला, दाख संग, खावे पीड़ा नष्ट।।
- नींबू के छिलके सुखा, बना लीजिये राख। मिटै वमन मधु संग ले, बढै वैद्य की साख।।

वृद्धजन सेवा

- प्रो. सत्यदेव सिंह

सामान्यतः मनुष्य की चार अवस्थायें– बचपन, किशोर, प्रौढ़ एवं वृद्धावस्था होती हैं। अतः वृद्धावस्था या बुढ़ापा जीवन की उस अवस्था को कहते हैं, जिसमें उम्र मानव–जीवन की औसत काल के समीप या उससे अधिक होती है। बुढ़ापे की अवस्था में साधारणतः रोग लगने की अधिक सम्भावना होती है और वृद्धजन की समस्यायें भी अलग प्रकार की होती हैं। वृद्धावस्था एक धीरे–धीरे आने वाली अवस्था है, जो स्वाभाविक व प्राकृतिक स्थिति में सबको प्राप्त होती है। वैसे 'वृद्ध' का शाब्दिक अर्थ होता है –बढ़ा हुआ, पका हुआ या परिपक्व और 'अवस्था' का अर्थ है– आयु या उम्र।

वृद्धावस्था को मनुष्य जीवन की सन्ध्या भी कहा जाता है, क्योंकि यह जीवन का अन्तिम पड़ाव होता है। इस अवस्था तक आते–आते मनुष्य का शरीर थकने लगता है, सभी इन्द्रियाँ शिथिल होने लगती हैं और शारीरिक क्रियायें उम्र के साथ–साथ अशक्त होने लगती हैं। वृद्धावस्था में बदन पर झुर्रियाँ स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगती हैं और सिर के बाल भी शनैः–शनैः सफेद होने लगते हैं। वृद्धजन की दुर्दशा के बारे में पंचतन्त्र में एक श्लोक इस प्रकार है–

वाक्यं नैव करोति बान्धवजनः
पत्नी न शुश्रषते।
धिक्कश्टं जरयाभिभूतपुरुषं
पुत्रोऽपि अवज्ञायते।।''
(पंच./काको./189)

अर्थात् बुढ़ापे से पीड़ित व्यक्ति की बात पर बन्धु–बान्धवजन ध्यान नहीं देते, पत्नी सेवा नहीं करती और बड़े कष्ट की बात तो यह है कि पुत्र भी उसकी आज्ञा का पालन नहीं करता है। इसका मतलब यह हुआ कि वृद्धावस्था में मनुष्य के अपने भी पराये जैसे हो जाते हैं।

महर्षि वाल्मीकि ने रामायण नामक ग्रन्थ के अन्तर्गत वृद्धावस्था के बारे में इस प्रकार श्लोकबद्ध किया है –

गात्रेषु वलयः प्राप्ताः श्वेताश्चैव शिरोरुहाः।
जरया पुरुषो जीर्णः किं हि कृत्वा प्रभावयेत्।।
– (अयोध्या काण्ड 105/23)

अर्थात् जब मनुष्य बुढ़ापे में जीर्ण–शीर्ण हो जाता है तो उसके शरीर में झुर्रियाँ पड़ जाती हैं और सिर के बाल सफेद हो जाते हैं। ऐसी दशा में वह वृद्धपुरुष क्या करके प्रभावित कर सकता है? अर्थात् वह किसी को प्रभावित नहीं कर सकता।

वृद्धजन को नित्य अभिवादन और सेवा करने के सम्बन्ध में मनु महाराज ने लिखा है –

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वृर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।।
(मनुस्मृति 2/21)

अर्थात् जो व्यक्ति अपने वृद्धजन को नित्य प्रणाम–नमस्कार और उनकी सेवा–सुश्रूषा करता है, उसकी आयु, विद्या, यश और बल– ये चार वस्तुयें बढ़ जाती हैं। अतः बड़े–बूढ़ों का आदर–सम्मान और सेवा–सुश्रूषा अवश्य करना चाहिए।

कोई भी मनुष्य इस बात को कहने का साहस नहीं कर सकता है कि वह सब कुछ जानता है। सब कुछ केवल परमेश्वर जानता है। सब कुछ न जानने से अज्ञात विषयों में सदा सन्देह बना रह सकता है और सन्देह रहने से कर्त्तव्य पूरा करने में बाधा आती है। अतः बुद्धिमान् मनुष्य सदा ज्ञानियों की सेवा करते रहते हैं। मनुष्य को सदा अपना ज्ञान बढ़ाते रहना चाहिए क्योंकि **'विद्यया अमृतं अश्नुते'** अर्थात् विद्या से ही अमरता या मोक्ष प्राप्त होता है। किसी ने कहा भी है–**'वयसा वृर्द्धयेत् विद्याम्'**– आयु के साथ विद्या को भी बढ़ाना चाहिए। यह तभी सम्भव है जबकि विद्या वृद्धों की सेवा की जाये।

यही बात वेद भी कहता है

–**'वरिवस्यन्नुशने काव्याय'** अर्थात् कमनीय, क्रान्तदर्शी विद्वान् की सेवा कर।

प्रत्येक माता–पिता अपनी सन्तान के लालन –पालन, भरण–पोषण व संवर्द्धन में महान् कष्ट का अनुभव करते हैं, सन्तान अपने माता–पिता के इस ऋण से कदापि उऋण नहीं हो सकते, यही सन्तान के ऊपर पितृ ऋण भी है। अतः सन्तानों को चाहिए कि वे अपने माता–पिता, दादा–दादी, नाना–नानी आदि पूज्यों को स्थान, वस्त्र, भोजन आदि जीवनोपयोगी वस्तुयें यावज्जीवन देते रहें। वैदिक धर्म में माता–पिता की सेवा नित्य कर्त्तव्य बताया गया है और इसके लिए एक **'पितृयज्ञ'** नामक यज्ञ का विधान भी किया है।

हमारे आर्ष ग्रन्थ 'वेद' आदि वृद्धजन की सेवा का आदेश भी करते हैं। ऋग्वेद में एक मन्त्र आता है–

''त्वं वृध इन्द्र पूर्व्यो
भूर्वरिवस्यन्नुशने काव्याय।
परा नववास्त्वमनुदेयं महे
पित्रे ददाथ स्वं नपातम्।।

शब्दार्थ – हे इन्द्र–हे ऐश्वर्य सम्पन्न, त्वम् – तू, वृद्धः–बूढ़ों की, वरिवस्यन्–सेवा करने वाला और, पूर्व्यः–अपने पूर्वजों का हितकारी, भूः–हो, और उशने काव्याय–चाहने योग्य ज्ञानी के लिये, महे–पूज्य, पित्रे–पिता के लिए, नववास्त्वम्–नया बसने योग्य घर आदि सामान तथा नपातम्–अखुट, स्वम्–धन तथा अनुदेयम्–बाद में देने योग्य, दक्षिणा आदि, परादादाथ–दिया कर।

इस मन्त्र की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है। प्रायः देखा जाता है कि ऐश्वर्य प्राप्त करके मनुष्य प्रमादी–अभिमानी हो जाता है और परिवार समाज व राष्ट्र के प्रति अपना कर्त्तव्य भूल जाता है। धन–वैभव की ऐंठ में आकर वह अपने माता–पिता, गुरुजन तथा ज्ञानियों की उपेक्षा–अनादर करने लगता है। इसीलिए वेद सावधान करता हुआ वृद्ध, असहाय व विद्वानों की सेवा करने का आदेश करता है।

युवकों की अपेक्षा बुजुर्गों को संसार का अनुभव अधिक होता है और उन्होंने अनेक उत्थान व पतन देखे होते हैं। विषम परिस्थितियों में पड़कर उसका विस्तार कैसे हुआ, इत्यादि का जो ज्ञान वृद्धों को रहता है, युवकों में प्रायः उसकी सम्भावना न्यूनतम होती है। दूसरों के अनुभव से लाभ उठाने वाला मनुष्य बहुत से दुःखों से बच जाता है। अतः वेद वृद्धों–ज्ञानवृद्धों, धर्मवृद्धों, वयोवृद्धों की सेवा का विधान करता है। वर्तमान पीढ़ी को वृद्धजन–सेवा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। वस्तुतः वृद्धजन–सेवा मार्ग ही पितृ ऋण से उऋण होने का सच्चा मार्ग है।

'स्तुति'

गुणकीर्तन श्रवण और ज्ञान होना, इसका फल प्रीति आदि होते हैं।

'प्रार्थना'

अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं उनके लिए ईश्वर से याचना करना, इसका फल निरभिमान आदि होता है।

'उपासना'

जैसे ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं वैसे अपने करना, ईश्वर को सर्वव्यापक, अपने को व्याप्य जान के ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है ऐसा निश्चय योगाभ्यास से साक्षात् करना उपासना कहाती है, इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि है।

आरोग्य और दीर्घायु

– स्वामी योगेश्वरानन्द सरस्वती, तपोवन

जीवन की अनगिनत स्थितियां–परिस्थितियां ऐसी होती हैं, जहां सुझाव, विचार, उपदेश – यदि निष्क्रिय हो जाते हैं तो व्यक्ति के जीवन का ढांचा अलग ही बनकर तैयार हो जाता है और यदि एक बार व्यक्तित्व का निर्माण हो गया, तो फिर उसे बदलने की सभी कोशिशें व्यर्थ हो जाती हैं। चूंकि व्यक्ति की आदतें ही उसकी दिनचर्या में शामिल होती है, जिसके कारण वही आदतें परिपक्व होने पर उसे सुख–दुख, हानि–लाभ देती रहती हैं। इसलिए प्रारंभिक क्षणों से लेकर अंत तक एक ऐसे जीवन क्रम की आवश्यकता है, जिससे पूर्णतया सुखद अनुभूति के साथ जीवन का कंटकाकीर्ण मार्ग आसानी से तय हो सके।

वेदों में कामना की गयी है– **जीवेम–शरदः –शतम्।** हे मानव! तू सौ वर्षों तक निरोग होकर रह। परंतु वर्तमान में यह कथन अतिश्योक्ति ही प्रतीत होता है। वस्तुतः लोभ, मोह, भय, व्यसन आदि अनेक दोष शरीर को निरंतर जला रहे हैं। इन कारणों से आज व्यक्ति दीर्घायु से घबराता है, वह स्वयं ही लम्बी उम्र तक जीना नहीं चाहता। 30 वर्ष की आयु में ही शब्द टूटे–टूटे से निकलने लगते हैं, 40 वर्ष के बाद शरीर अपने हथियार डालने प्रारम्भ कर देता है। इस आयु वाले व्यक्ति कहते हैं– 'आधी तो कट गई, भगवान के भरोसे जो बची है वह भी कट ही जाएगी।' कहने का मतलब यह है कि हर व्यक्ति अपने आप से पूरी तरह से निराश हो गया है।

हमारी आंखों की ज्योति 30–40 वर्ष की आयु में ही मंद पड़ जाती है, सुनने की क्षमता कम हो जाती है, सिर के सारे बाल धीरे–धीरे पककर गिरने लगते हैं तथा चेहरे की कांति समाप्त हो जाती है। इस प्रकार देखने से ही ऐसा प्रतीत होता है मानो बुढ़ापे ने दस्तक दे दी हो।

उपरोक्त सभी अनियमिताताओं के लिए खान–पान और आचरण से जुड़ी हमारी गंभीर भूलें ही मुख्य रूप से उत्तरदायी हैं। वैसे भी दुर्व्यसनों की मार युवावस्था में उतनी कष्टप्रद नहीं, जितनी वृद्धावस्था में होती है, क्योंकि व्यसनों का विष शरीर में अलग–अलग स्थानों में एकत्र होकर फैलता रहता है और इससे शरीर को संचालित करने वाले आंतरिक यंत्र धीरे–धीरे विकृत एवं दुर्बल होकर निष्क्रिय होने लग जाते हैं। इस प्रकार जब शरीर विष के प्रभाव से भर जाता है, तो ये विजातीय तत्त्व चरम सीमा पर पहुँचकर अपना दुष्प्रभाव दिखाना प्रारंभ कर देते हैं। परिणाम स्वरूप व्यसनी का जीवन अत्यंत ही दुखदायी हो जाता है और वह छोटे–छोटे रोगों से घिर कर उनसे मुक्ति पाने के लिये छटपटाता रहता है।

यथार्थ में पूर्ण आरोग्य के साथ ही दीर्घायु का लाभ मिले, तभी जीवन का असली आनंद पाया जा सकता है। इसलिए कहा जाता है कि चिंता की चाबी से नरक का द्वार खुलता है और चिंतन की चाबी से स्वर्ग का। इस प्रकार निश्चय ही यह हमारे हाथ में है कि चिंता के द्वारा हम अपनी अधोगति करें अथवा चिंतन के द्वारा ऊर्ध्वगति और जन्म–मरण के बंधनों से मुक्ति पा लें, दुखों के महासागर से पार तर जाएं। यह सब कुछ हमारे वश में है।

जिन्होंने अपने जीवन का मार्जन कर (मांजकर) पूर्णरूपेण शुद्ध बनाया, उन्होंने हर क्षेत्र में अलग ही सम्मान प्राप्त किया। इसलिए आवश्यकता है ऐसे संकल्पों की, जिनसे विनाश नहीं, विकास हो। एक ऐसी स्थिति की ओर पदार्पण हो, जिसमें वृद्धावस्था का दुख नहीं, एक विशेष प्रकार का सुख समाहित है। ये संकल्प कुछ इस प्रकार के हो सकते हैं–

1. मैं किसी भी प्रकार का व्यसन नहीं करूंगा और जो अब तक करता रहा हूँ उन्हें भी त्यागता हूँ।
2. मैं क्रोध से बचकर रहूंगा।
3. मैं झूठ नहीं बोलूंगा।
4. मैं सभी से प्रेम करूंगा।
5. किसी के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करूंगा।
6. प्रतिदिन प्रातः जल्दी उठकर प्रभु का नाम, स्मरण व ध्यान करूंगा, अपने मन को बाह्य विषयों से हटाकर ईश्वरीय सत्ता में लगाने का प्रयास करूंगा।
7. किसी की बुराई में जीवन के अनमोल क्षण नष्ट नहीं करूंगा।
8. पवित्र व सादगी भरा जीवन व्यतीत करूंगा।
9. दुखी व्यक्तियों की सेवा अवश्य करूंगा।
10. अपनी सभ्यता–संस्कृति की रक्षा के लिए यथासंभव प्रयास करूंगा।

इन संकल्पों के द्वारा निश्चय ही अंदर की दुनिया सुवासित होने लगेगी, जीवन सुहावना व सुन्दर हो जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति को यही प्रयास करना चाहिए कि वह हर क्षेत्र में संयम अपनाए। दोषों का परित्याग करें और आत्म–कल्याण करके ऊंचा उठने का निरंतर प्रयास करे।

सेवानिवृत्त होने के बाद लोग अक्सर समय न कट पाने की शिकायत करते हैं। इसी प्रकार अधिक उम्र होने पर उबाऊपन महसूस होता है। ऐसी दशा में लोग कुछ गलत आदतों के भी शिकार हो जाते हैं, जो कि अनुचित है। आवश्यकता इस बात की है कि जीवन की इस स्वर्णिम संध्या में नियम–संयम का पालन करते हुए, साधना द्वारा इसका दीर्घकाल तक आनंद प्राप्त किया जाए।

यहाँ मैं खाली समय न बीत पाने की शिकायत करने वाले व्यक्तियों के लिए खासतौर पर यौगिक दिनचर्या की जानकारी दे रहा हूँ। इसका पालन करना निश्चित ही आरोग्य और दीर्घायु हेतु उत्तम होगा। यौगिक दिनचर्या के अनुरूप आपके पूरे चौबीस घंटों की अवधि कुछ इस प्रकार व्यवस्थित होनी चाहिए –

जागरण – प्रातः 3 बजे।

शौच–शुद्धि और स्नान आदि– 3 से 3.30 बजे तक।

ध्यान का अभ्यास– 3.30 से 6.00 बजे तक।

व्यायाम, मालिश, प्राणायाम आदि– 6 से 7.00 बजे तक।

स्वाध्याय– 7.00 से 8.30 बजे तक।

लेखन व अल्पाहार– 8.30 से 9.30 बजे तक। अल्पाहार में दूध, फल, अंकुरित अन्न आदि लें।

अल्प विश्राम– 9.30 से 10.00 बजे तक।

ध्यान– 10.00 से 12.00 बजे तक।

विविध कार्य– 12.00 बजे से 1.00 बजे तक।

भोजन– 1.00 से 2.00 बजे के बीच। इसमें हरी सब्जी, सलाद और रोटी को वरीयता से शामिल करें।

विश्राम– 2.00 से 3.00 बजे तक।

स्वाध्याय, लेखन आदि– 3.00 से 4.00 बजे तक।

अल्पाहार– 4.30 से 5.00 बजे तक।

संध्या और ध्यान– 5.00 से 7.00 बजे तक।

भ्रमण– 7.00 से 7.30 बजे तक।

रात्रि भोजन– 7.30 से 8.30 बजे तक।

वज्रासान में विश्राम– भोजनोपरांत 15 मिनट या अधिक।

निद्रा– वज्रासन में विश्राम के बाद जाप करते–करते योगनिद्रा की तैयारी और फिर शयन। इसमें अपनी सुविधानुसार संशोधन कर लें।

आरोग्य व दीर्घायु की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित सुझावों पर विशेष ध्यान दें–

1. बिना भूख के भोजन न करें और हितकर खाद्य–पेय पदार्थ ही लें।
2. ईर्ष्या से बचें।
3. नित्य व्यायाम, प्राणायाम और ध्यान का अभ्यास करें।
4. जब तक श्वास है पुरुषार्थ में पूर्ण आस्था रखें।

5. अपना कार्य स्वयं पूरा करने की कोशिश करें।
6. निराशा से बचें, अन्यथा यह आपके लिए अभिशाप बन जाएगी।
7. हमेशा प्रसन्न रहें।
8. दूसरों को भी हमेशा खुशहाल रखने का प्रयास करें।

संयम, नियमितता, सदाचार आदि के साथ–साथ अच्छी सेहत और दीर्घायु के लिए आहार पर भी ध्यान देना अति आवश्यक है। हितकारी आहार से ही हमारे शरीर को पोषण मिलता है और जीवनी शक्ति बढ़ती है। फलस्वरूप हम दीर्घकाल तक इस जीवन का आनंद लेते हैं।

मुख्यतः निम्नलिखित आहार तालिका के अनुरूप अपने खान–पान का क्रम व्यवस्थित करना इस उद्देश्य से अधिक उचित होगा–

प्रातः मुख–शुद्धि आदि के पश्चात् मौसम के अनुसार एक गिलास गुनगुने या ताजे जल में एक नींबू निचोड़कर पी जाएं। इस जल में एक चम्मच शुद्ध शहद मिलाकर पीना और अधिक लाभप्रद होगा। प्रातःकाल अल्पाहार के रूप में इनमें से किसी एक को लिया जा सकता है–

1. खीरा और लौकी का रस मिश्रित या किसी भी एक का।
2. गाजर और आंवला का रस।
3. अदरक और पुदीना का रस।
4. मिठाई वाले पेठे का रस।
5. गेहूं के ज्वारे का रस।
6. तरबूज या खरबूजा का एक गिलास रस।
7. दूध और गाजर का रस।
8. अंकुरित मूंग, मोठ, चना, मूंगफली आदि।
9. मूंगफली का दूध।
10. नारियल का दूध।
11. देशी गुरुकुल वाली चाय।
12. हरी सब्जियों का सूप।
13. दूध और खजूर – 250 मि.ली. दूध में सात खजूर बीज निकालकर अच्छी प्रकार पकाकर सेवन करने से प्रचुर शक्ति प्राप्त होती है।

दोपहर में मौसमी हरी सब्जियां, गेहूं, बाजरा, मक्का आदि की रोटी और सलाद का सेवन प्रचुर मात्रा में करें। हरी सब्जियां मिलाकर तैयार की गयी रोटी अधिक पौष्टिक होती है। अदरक, हरी मिर्च, नमक आदि आवश्यकतानुसार इसमें मिलाए जा सकते हैं। निम्न रक्तचाप वालों के लिए आटे में थोड़ा–सा लहसुन मिलाकर तैयार की गयी रोटी अधिक हितकारी होती है।

एक बात और, आहार की अपेक्षा सब्जी की मात्रा अधिक रखें और प्रचुर मात्रा में सलाद का सेवन करें। दही भी ले सकते हैं। इससे शरीर को पूर्ण पोषण मिलेगा और रोगादि से सुरक्षा होगी। चुकंदर का हलवा, लौकी अथवा पेठे का रायता, जीरे का रायता आदि को भी दोपहर के भोजन में शामिल किया जा सकता है। चुकंदर का हलवा तैयार करने की विधि बहुत ही आसान है चुकंदर, केला, किशमिश, जीरा पाउडर व सेंधा नमक लेकर चुकंदर को कद्दूकस करके कटे हुए केले व अन्य द्रव्यों को मिला लें। यह हलवा अत्यंत ही पौष्टिक व रुचिकर होता है।

अपराह्न काल में हरी सब्जी या चने का सूप लेना हितकर है। चने का सूप बनाने के लिए एक मुट्ठी चना रात को डेढ़ गिलास जल में भिगो दें। प्रातः यदि जल झागदार हो गया हो, तो उसे फेंककर साफ जल लें, अन्यथा उसी जल में नमक, हल्दी, जीरा और काली मिर्च डालकर उबालें। जब दो–तिहाई जल शेष रह जाए, तो फिर मिक्सी में पीस लें अथवा वैसे ही छान लें। फिर इसमें हरा धनिया डालकर गरम–गरम पिएं। दोपहर के बाद फल या जूस लेना भी हितकर है। रात में दलिया और हरी सब्जियां या फिर सब्जी, रोटी, सलाद लें।

ध्यान रहे, दिन की अपेक्षा रात को भोजन हल्का होना चाहिए। रात के भोजन में सब्जियों की मात्रा साठ प्रतिशत, फलों की बीस प्रतिशत, रोटी की दस प्रतिशत तथा सलाद की दस प्रतिशत होनी चाहिए।

महौषध – शहदकल्प

– श्री नीलकण्ठ जी भट्ट

शहद में दीर्घायु रखने एवं स्वस्थ बनाये रखने की वैसी ही अद्भुत शक्ति है, जैसी जड़ी–बूटियों में। शहद मधुमक्खियों के द्वारा अनेक वृक्षादिकों के पुष्पों का रस लाकर एकत्र किया जाता है। यहाँ शहद के कतिपय उपयोग दिये जा रहे हैं–

1. थकान होने पर –शहद के सेवन से ताजगी आती है।
2. शहद को नारंगी, दूध, केवड़ा रस तथा पानी में मिलाकर पीने से मांसपेशियों को तुरंत शक्ति मिलती है।
3. काली खाँसी होने पर – शहद के साथ दो बादाम लेने से आराम मिलता है।
4. बवासीर में – एक चुटकी त्रिफला शहद में मिलाकर लेने से आराम होता है।
5. शरीर के किसी भाग के जलने पर शुद्ध शहद लगाने से जलन कम होती है और आराम मिलता है।
6. बिच्छू के काटे हुए स्थान पर – शहद, घृत और चूना बराबर मात्रा में मिलाकर लगाने से जहर उतर जाता है।
7. गरम पानी में शहद मिलाकर दिन में तीन बार लेने से जुकाम ठीक होता है।
8. शहद चाटने से हिचकी बंद होती है।
9. शहद नियमित सेवन करने से कब्ज मिटता है।
10. शुद्ध शहद आँखों में लगाने से रोशनी बढ़ती है।
11. शहद के सेवन से पुराने घाव भी जल्दी भर जाते हैं।
12. अदरक का रस और शहद मिलाकर बराबर लेने से खाँसी और कफ दूर होते हैं।
13. प्रातः शौच जाने से पूर्व एक गिलास ठंडे पानी में दो चम्मच शहद मिलाकर नियमित रूप से लेने पर शरीर का मोटापन एवं भारीपन दूर होता है।
14. यदि किसी घाव से खून बंद नहीं होता हो तो उस पर शहद लगाना चाहिये।
15. अनिद्रा की शिकायत में नियमित रूप से शहद लेने से अच्छी नींद आती है।
16. सुजाक रोग में ठंडे जल के साथ शहद लेने से आराम मिलता है।
17. शहद को पानी के साथ पीने से चर्मरोग मिटता है।
18. रक्तचाप बढ़ने पर लहसुन के साथ शहद लेना चाहिये।
19. बच्चों को नौ मास शहद देने से किसी प्रकार का रोग नहीं होता।
20. शहद कीड़े एवं पायरिया से दाँतों को बचाता है और बच्चों को दाँत निकलने की पीडा भी नहीं होती।
21. मलेरिया बुखार में एक गिलास में गरम जल लेकर उसमें दो चम्मच शहद डालकर पीने से खूब पसीना आकर बुखार उतर जाता है।
22. मुँह के फोड़े–फुंसी में प्रातः शुद्ध जल दो चम्मच शहद डालकर लेना चाहिये।
23. आँतों की शिकायत में आँवले के रस के साथ शहद का सेवन करना चाहिये।
24. अनार के रस में शहद मिलाकर लेने से दिमागी कमजोरी, सुस्ती, निराशा तथा थकावट दूर होती है।
25. आधे सिरदर्द में एक छोटे प्याले में गुनगुना पानी करके उसमें दो चम्मच शहद डालकर पीना चाहिये।
26. टांसिल बढ़ने पर सेब के रस में शहद मिलाकर लेना चाहिये।

ईर्ष्या और बैर की अग्नि बुझाओ

– महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

बहुत समय पहले की बात है कि मथुरा में राजा बाबू नाम के एक सेठ रहते थे। धर्म की ओर उनकी बहुत रुचि थी। कितने ही मन्दिर उन्होंने बनवाये। एक पाठशाला बनवाई, जिसमें विद्वान् संन्यासी पढ़ते थे। राजा बाबू का एक और सेठ लक्ष्मीचन्द से जमीन के सम्बन्ध में झगड़ा था। झगड़ा बढ़ते–बढ़ते न्यायालय में पहुंचा। अभियोग चलने लगा। कई वर्ष अभियोग चलता रहा। राजा बाबू अभियोगों को भी लड़ते थे और अपने घर का काम भी करते थे। उनकी बनवाई हुई पाठशाला में प्रत्येक रात्रि को कथा होती थी। राजा बाबू सर्वदा उसे सुनने जाते। कथा सुनते–सुनते उनके मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया। अपने गुरु से पूछकर वे पाठशाला में रहने लगे। एक कमरे में पड़े रहते। खाना घर से आ जाता, वे खा लेते और जाप करते रहते। बहुत समय बीत गया। एक दिन उन्होंने अपने गुरु से कहा –''यदि आपकी कृपा हो तो संन्यास ले लूँ?''

गुरु ने कहा–''नहीं राजा बाबू! अभी तुम संन्यास के योग्य नहीं हुए।''

राजा बाबू ने सोचा–'मैं घर पर नहीं जाता, परन्तु मेरी रोटी तो घर से आती है। अब घर से रोटी नहीं मँगाऊँगा। यहीं एक नौकर रख लूँगा, वही बना दिया करेगा।' ऐसा ही किया उन्होंने। और फिर एक दिन यह सोचकर कि अब तो घर से कोई सम्बन्ध नहीं, वे फिर बोले–''गुरु महाराज! अब यदि संन्यास ले लूँ तो?''

गुरु ने कहा–"नहीं, अभी समय नहीं आया।"

राजा बाबू ने सोचा–'मैं अभी नौकर से रोटी बनवाता, इसीलिए गुरुजी नहीं मानते। यह भी छोड़ दूँगा। भिक्षा माँगकर खाऊँगा और आराम की सब वस्तुएँ भी छोड़ दूँगा।' तब ऐसा ही किया उसने। सुबह के समय नगर में जाता, भिक्षा माँग करके लाता और सारा दिन आत्म–चिन्तन में मस्त होकर बैठा रहता। पर्याप्त समय बीत गया। फिर प्रार्थना की गुरु से–''गुरुजी, मुझे संन्यास दे दीजिए!''

गुरु ने सोचकर कहा–"अभी नहीं राजा बाबू!"

राजा बाबू आश्चर्यचकित कि अब क्या त्रुटि रह गई? सोचकर देखा और फिर अपने–आपको कहा–'मैं सभी जगह माँगने गया हूँ परन्तु सेठ लक्ष्मीचन्द के यहाँ माँगने नहीं गया। इसलिए शत्रुता की पुरानी भावना अब भी मेरे हृदय में बसी हुई है। इस भावना को छोड़ देना होगा।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही सेठ लक्ष्मीचन्द के मकान पर पहुँच गया। जाकर अलख जगाई–'भगवान् के नाम पर भिक्षा दो!''

सेठ लक्ष्मीचन्द के नौकरों ने राजा बाबू को देखा तो दौड़े–दौड़े सेठ के पास गए। हाँपते हुए बोले–''सेठजी! राजा बाबू आपके यहाँ भीख माँगने आया है!''

लक्ष्मीचन्द आश्चर्य से बोला–''यह कैसे हो सकता है? तुम्हें भ्रम हुआ है, कोई और होगा वह।''

नौकरों ने कहा–''नहीं सेठजी! यह राजा बाबू ही हैं। यदि आप कहें तो खाने में विष मिलाकर दे दें। सर्वदा के लिए झगड़ा समाप्त हो जायेगा।''

लक्ष्मीचन्द उच्च स्वर में बोले–''नहीं, मुझे देखने दो।''

मकान के द्वार पर आकर उन्होंने देखा कि राजा बाबू झोली पसारे खड़े हैं। राजा बाबू ने उन्हें देखा और झोली फैलाकर बोले–''सेठजी, भिक्षा!''

लक्ष्मीचन्द दौड़कर आगे बढ़े, चिल्लाकर बोले–''राजा!'' राजा बाबू को अपनी छाती से लगा लिया। राजा बाबू ने झुककर उनके चरणों को स्पर्श किया। लक्ष्मीचन्द भी उनके पैरों में जा गिरे, बोले–''राजा बाबू–ऊपर चलो, मेरे साथ बैठकर खाना खाओ।''

राजा बाबू बोले–''नहीं सेठजी! मैं तो भिखारी

बनकर आया हूँ। भीख माँगने आया हूँ। भीख डाल दो मेरी झोली में!''

उसी समय एक नौकर भागता हुआ आया, बोला–''सेठजी!'' आपका तार। देखिये, इस तार में क्या लिखा है?''

लक्ष्मीचन्द ने खोलकर पढ़ा। तार राजा बाबू के बेटों का था। कलकत्ता से आया था–''हमारे पिता राजा बाबू का कहीं पता नहीं लगा। भूमि का झगड़ा अभी समाप्त नहीं हुआ, किन्तु इस जमीन को लेकर हम क्या करेंगे? इस तार द्वारा हम भूमि से अपना अधिकार वापस लेते हैं। हमारे पिताजी नहीं है। आप कृपा करके हमारे पिता बनिये। हमें अपनी रक्षा में लीजिये।''

लक्ष्मीचन्द रोते हुए बोले–''नहीं, ऐसा नहीं होगा। उन्हें लिखो कि भूमि उनकी है। मुझे नहीं चाहिए। मैं पिता बनकर उनकी रक्षा करुंगा। आज से वे केवल राजा बाबू के नहीं, मेरे भी बेटे हए।''

पश्चात् राजा बाबू भिक्षा लेकर मुड़े तो देखा, सामने गुरुजी खड़े हैं–हाथ में गेरुवे वस्त्र लिए हुए। राजा बाबू को छाती से लगाकर बोले–''अब तू संन्यासी बनने के योग्य हुआ राजा बाबू! अब ये कपड़े पहन!''

इस प्रकार जब तक मन के अन्दर घृणा है, तब तक गायत्री के जाप का क्या लाभ? गायत्री की उपासना यदि करनी है, तो मन से घृणा को निकाल दो। ईर्ष्या और बैर की भावना को दूर निकाल दो तो फिर देखो, आनन्द और सुख मिलता है या नहीं?

त्रिदोष प्रकोप

वात प्रकोप–हलके, रूखे, शीघ्र पचने वाले पदार्थों का दीर्घकाल तक सेवन करने, बहुत दिनों तक अल्प मात्रा में भोजन करने, अति शीत सहने या शीतल पदार्थ का अति सेवन करने, अधिक परिश्रम करने, किसी प्रिय वस्तु की तीव्र इच्छा होने पर भी प्राप्त न होने, शोक, भय, कामुकता या चिन्ता से ग्रस्त होने पर, देर रात तक जागने पर, देर तक स्नान करने से और भोजन के जीर्ण होने व रस रक्त आदि धातुओं के क्षीण होने (जैसे वृद्धावस्था) आदि कारणों से वात (वायु) कुपित होता है। अपच और कब्ज रहने से वात कुपित होता है। भोजन का पाचन हो जाने पर, रात के पिछले प्रहर में, जीवन के चौथे काल (वृद्धावस्था) में और वर्षा काल में भी वात कुपित होता रहता है।

पित्त प्रकोप– तेज मिर्च मसालेदार, तले हुए, खट्टे, नमकीन पदार्थों के अति सेवन करने, अधिक गर्म आहार या पेय का सेवन करने, अधिक गर्मी और धूप में दीर्घकाल तक बने रहने, क्रोध करने, प्यास के वेग को देर तक रोकने, आदि कारणों से पित्त कुपित होता है। भोजन की पाचन क्रिया शुरू होते समय, मध्यरात्रि के समय, युवा काल और शरद ऋतु में पित्त कुपित रहता है।

कफ प्रकोप– मधुर, चिकने, देर से पचने वाले भारी पदार्थ और शीतवीर्य गुण वाले पदार्थों का अति सेवन करने, खटाई खाने, खराब तैल में तले हुए पदार्थ खाने, आलस्य करने, परिश्रम न करने, बहुत सोने और लोभी प्रवृत्ति रखने आदि कारणों से कफ कुपित होता है। भोजन के अन्त में, प्रातः काल के समय, शैशव काल और वसन्त ऋतु में कफ कुपित रहता है।

त्रिदोष प्रकोप– तीनों दोषों के कुपित होने की अवस्था को 'सन्निपात' होना कहते हैं। जो दोष जिन–जिन कारणों एवं स्थितियों से कुपित होते हैं, उन–उन कारणों और स्थितियों के विपरीत आहार–विहार करने से उन दोषों का शमन हो जाता है।

माता–पिता का आशीर्वाद

– **स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक**

''माता–पिता अपने बच्चों के लिए जो तपस्या करते हैं, बच्चे माता पिता की कितनी भी सेवा करें, तो भी वे उनके उपकार का बदला पूरी तरह से नहीं चुका सकते।''

''जब आप छोटे बच्चे थे, तो आपके माता–पिता ने आपकी बहुत सेवा की। आपको खिलाया पिलाया, पाल–पोस कर बड़ा किया। कितने ही दुखों से बचाया। लाखों–करोड़ों रूपया आप पर खर्च किया। यदि कभी आप रोगी हो गए, तो आपकी चिकित्सा कराने के लिए दूर–दूर तक वैद्य, डॉक्टरों की खोज की। आपको दूर दूर तक लेकर गए, आपकी चिकित्सा कराई, आपको स्वस्थ बनाया इत्यादि। इस प्रकार से उनके बहुत उपकार हैं आप पर।''

''जब आप छोटे बच्चे थे, तब आप कमजोर थे, आपके माता पिता बलवान थे, तब उन्होंने आपकी रक्षा की, सेवा की। अब आप बड़े हो गए। आपके माता पिता वृद्ध हो गए। अब आप बलवान हो गये, और आपके माता पिता की शक्ति कम हो गई। अब उनकी वृद्धावस्था में उनको आपकी सेवा और रक्षा की आवश्यकता है।''

''यदि आप उनके किए उपकार का कुछ बदला चुकाना चाहते हों, कुछ सुख–शान्ति, आनन्द और अपने माता पिता का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते हों, तो उनकी वृद्धावस्था में अब आप उनकी सेवा रक्षा करें। यदि आप ऐसा करेंगे, तो इससे उनके चेहरे पर मुस्कुराहट होगी। जब आपके वृद्ध माता पिता के चेहरे पर मुस्कुराहट होगी, तो इससे आपको भी प्रसन्नता होगी। और इस प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह होगी, कि ''यदि आपके वृद्ध माता पिता के चेहरे पर मुस्कुराहट का कारण 'आप' होंगे, तो आप बहुत ही भाग्यशाली माने जाएंगे। तब ईश्वर भी आपसे प्रसन्न होगा। और आपको इस जन्म में तथा अगले जन्म में भी सुख–शान्ति, आनंद, उत्साह, प्रसन्नता आदि देगा।''

''इसलिए अपने वृद्ध माता पिता की सेवा तन–मन–धन और पूरी श्रद्धा से करें।''

स्वामी दयानन्द

वेद है विश्व का अनमोल खजाना।
दयानन्द ने है इसका मोल जाना।
कर शिरोधार्य आज्ञा गुरू विरजान्नद की,
चलो वेदों की ओर मानव को मानव से जोड़ो।
पारस्परिक भातृ भाव जगाओ,
वेदों में रूचि बढ़ाओ।
वेद पढ़ो व पढ़ाओ,
स्वयं बढ़ो सबको बढ़ाओ।
मानवता का पाठ पढ़ाओ।
जन जन ये वचन भरें।
वैदिक संस्कृति जन जन अध्वर करें।
समस्त बुराईयों से मुख मोड़ें।
ज्ञान सिन्धु में लगाऐ डुबकी।
कलुषित भाव तिरोहित करें।
दयानन्द हैं महापुरोधा।
इस युग के हैं महायोद्धा।
पिया विष जन कल्याण के लिए।
समरसता का भाव लिए।
इस संसार से विदा हुए।
उसकी विद्वता का नहीं कोई सानी।
वह वीर स्वतंत्रता सेनानी
निराभिमानी स्वाभिमानी।
हम सब मिल गाएं
उसकी अमर कहानी।

– **अशोक जौहरी,** गाजियाबाद

भूत और भविष्य की चिंताओं से मुक्ति

– स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

''भूतकाल की बुरी घटनाओं को बार–बार याद न करें। ऐसा करने से आपका दुख बढ़ेगा।''

''जिन लोगों ने आपके ऊपर अन्याय किया, उनको बार–बार याद करने से उनके प्रति द्वेष और क्रोध बढ़ता है, जिससे आपके मन की स्थिति बिगड़ती है। अशांति बढ़ती है। शांति खो जाती है। इसलिए पुरानी दुखदायक घटनाओं को बार–बार याद न करें।''

उन घटनाओं से इतनी शिक्षा तो अवश्य लेवें, कि तब आपका ज्ञान का स्तर कम था, आप का अनुभव कम था। इसलिए उन घटनाओं में आपको थोड़ा अन्याय और दुख सहन करना पड़ा परन्तु उन घटनाओं से आप को बहुत कुछ सीखने को भी मिला, कि ''भविष्य में हम सावधान रहेंगे और पूरा प्रयत्न करेंगे, कि वैसी अन्यायपूर्ण दुखदायक घटनाएं फिर से न हों।'' यह तो हुई भूतकाल की बात।

इसी प्रकार से भविष्य भी अनिश्चित है। प्रत्येक व्यक्ति कर्म करने में स्वतंत्र है और उसके पास अपना दिमाग है। वह अपने दिमाग से सभी योजनाएं बनाता है। ''हर व्यक्ति के संस्कार भी अलग–अलग प्रकार के हैं। इसलिए भविष्य में कब क्या होगा, कौन क्या करेगा, उसके बारे में कोई भी पूरी तरह से नहीं जानता, क्योंकि भविष्य अनिश्चित है, इसलिए उसकी अधिक चिंता न करें, अधिक चिंता करने से आपका तनाव बढ़ेगा।''

इसलिए वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए, अपनी सुरक्षा का प्रबंध करते हुए, भविष्य में क्या–क्या समस्याएं आ सकती हैं, वर्तमान परिस्थितियों के आधार पर, बुद्धिमत्ता से उसका कुछ अनुमान लगा कर अपनी निकट भविष्य की योजनाएं अवश्य बनाएं। ''जैसे कि आपके निकट भविष्य की खाने–पीने की, दवाई–चिकित्सा की, और जीवन सुरक्षा की, छोटी–छोटी योजनाएं 4 से 5 वर्ष तक की बनाएं। सरकार भी पंचवर्षीय योजनाएं बनाती है। बहुत दूर की 20 से 30 वर्ष तक की न सोचें, क्योंकि वह भविष्य आपके अधिकार में नहीं है। किसी को पता नहीं है, कि आने वाले समय में 20–30 वर्ष बाद क्या होगा? यह तो राजनीतिक लोगों का काम है। वे कर लेंगे। अतः उसकी चिंता आप न करें, और प्रसन्न होकर जिएं। आर्थिक क्षेत्र में कुछ लंबी योजना 15 से 20 वर्ष तक की बना सकते हैं। अर्थात भविष्य निधि के लिए थोड़ा–थोड़ा धन जमा करते रहें। रातों–रात करोड़पति बनने की कोशिश न करें, क्योंकि ऐसा करने पर आप भ्रष्टाचार करेंगे और वह आपके सुंदर, सुखद भविष्य का विनाश कर देगा।

चिंता रहित होकर सुरक्षित–ढंग से जीने का यही मार्ग सुखदायक है।

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थान्परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे।।

1– एक प्रकार के वे उत्तम लोग हैं, जो अपने स्वार्थ का त्याग करके दूसरों का हित करते हैं।

2– दूसरे सामान्य लोग हैं, जिनके स्वार्थ को हानि न पहुंचती हो तो यथाशक्ति परोपकार भी करते हैं।

3– तीसरे राक्षस–कोटि के लोग हैं, जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरों के हित का नाश कर देते हैं।

4– चौथी कोटि के वे लोग हैं, जो निष्प्रयोजन ही परहित का विघात करते हैं। उन्हें किस कोटि में रक्खूँ, यह समझ नहीं आता।

–भर्तृहरि

वैदिक साधन आश्रम

तपोवन, नालापानी देहरादून का

ग्रीष्मोत्सव

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी, तपोवन, देहरादून द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि ग्रीष्मोत्सव का कार्यक्रम **10 मई 2023 से 14 मई 2023** तक आयोजित किया जायेगा। इस अवसर पर वैदिक विद्वान आचार्य सोमदेव जी, गुरुकुल मलारना चौड़, जिला–सवांई माधोपुर, राजस्थान एवं पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ जी, आगरा तथा प्रसिद्ध भजनोपदेशक पं. राजेश प्रेमी जी, जालन्धर पधार रहें हैं। साध्वी प्रज्ञा जी, धौलास देहरादून यज्ञ की ब्रह्मा होंगी तथा यज्ञ स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी के निर्देशन में सम्पन्न होगा।

आप सब सपरिवार पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाने की कृपा करें।

आवश्यक सूचना

प्रिय पाठकगण! पिछले कई महीनों से ग्राहकों की शिकायत आ रही है कि उन्हें पवमान पत्रिका नहीं मिल रही है या समय पर नहीं पहुँच रही है। इस सम्बन्ध में आपको सूचित किया जाता है कि आश्रम के द्वारा पत्रिका के सभी ग्राहकों के साथ–साथ वे ग्राहक जिनका शुल्क समाप्त हो गया है, को भी लगातार पत्रिका भेजी जा रही है। आपसे अनुरोध है कि कृपया एक बार अपने नजदीकी पोस्ट ऑफिस को इस सम्बन्ध में जरुर सूचना दें। जिन सदस्यों का सदस्यता शुल्क समाप्त हो गया है, उनकी लिस्ट आगामी माह में क्रमशः पत्रिका में प्रकाशित कर दी जायेगी। आप आश्रम के टेलीफोन नम्बर पर भी अपने शुल्क की स्थिति मालूम करके आवश्यक धनराशि आश्रम के कैनरा बैंक के ''**पवमान**'' खाता, खाता संख्या–2162101021169, IFSC Code- CNRB0002162, में जमा करने का कष्ट करें। कृपया पत्रिका शुल्क जमा करने के पश्चात् आश्रम कार्यालय के टेलीफोन नं0–0135–2787001, अथवा मोबाईल नम्बर–7895978734, पर व्हाट्स–अप के माध्यम से अवश्य सूचित करने का कष्ट करें ताकि आपको रसीद भेजी जा सके। जिन पाठकों को पत्रिका रजिस्टर्ड पोस्ट से मंगानी है, उन्हें प्रतिवर्ष रू. 400/– डाक खर्च के देने होंगे। इस प्रकार आपको एक वर्ष में पत्रिका का मूल्य रू. 600/– का भुगतान करना होगा। यदि किसी कारण किसी माह आपको ''**पवमान**'' पत्रिका प्राप्त न हो तो आश्रम कार्यालय को सूचित कर दें। आपको पत्रिका पुनः भेज दी जायेगी। धन्यवाद

वैदिक साधन आश्रम तपोवन

नालापानी देहरादून दूरभाष-0135-2787001

आत्म कल्याण का स्वर्णिम अवसर

यजुर्वेद, सामवेद पारायण एवं गायत्री यज्ञ का विशेष आयोजन

तदनुसारेण दिनांक-10 मार्च 2023 (शुक्रवार) से 19 मार्च 2023 (रविवार) तक

यज्ञ के ब्रह्मा - डॉ० वेदपाल जी

यज्ञ के संचालक - स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी महाराज

वेद पाठ - श्रीमद् दयानन्द आर्ष ज्योर्तिमठ गुरूकुल पौंधा के ब्रह्मचारियों द्वारा

मान्यवर महोदय,

सादर् नमस्ते!

आप सबको यह जानकर हर्ष होगा कि पूर्व वर्षों की परम्परा का निर्वहन करते हुए **वैदिक साधन आश्रम तपोभूमि** (पहाड़ी पर) **यजुर्वेद, सामवेद पारायण एवं गायत्री यज्ञ** का आयोजन करने का निश्चय किया गया है। आपसे प्रार्थना है कि कार्यक्रम में सपरिवार भाग लेकर धर्म लाभ उठायें तथा ज्ञानार्जन, यश एवं पुण्य के भागी बनें।

कार्यक्रम सारणी

योग साधना	**:**	**प्रात: 4:30 बजे से 6:30 बजे तक**
यज्ञ	**:**	**प्रात: 7 बजे से 9 बजे तक**
प्रात:राश	**:**	**प्रात: 9 बजे से 9:30 बजे तक**
प्रवचन	**:**	**प्रात: 9:30 बजे से 11:30 बजे तक**
यज्ञ एवं प्रवचन	**:**	**सायं 3 बजे से 6 बजे तक**

आवास एवं भोजन की नि:शुल्क व्यवस्था तपोवन आश्रम द्वारा की जायेगी।

श्रद्धापूर्वक दिया गया दान ही स्वीकार किया जायेगा।

निवेदक

विजय कुमार आर्य	**प्रेम प्रकाश शर्मा**	**अशोक कुमार वर्मा**
अध्यक्ष	**सचिव**	**कोषाध्यक्ष**
09837444469	**09412051586**	**09412058879**

BASANTA MAL SAT PRAKASH

Manufactures of : All Kinds Shawls & Lohies

M : 094171-36756, 70877-54848

GHASS MANDI, LUDHIANA

हमारे पास बेबी सॉफ्ट शॉल, पूजा शॉल, स्टॉल शॉल, मिक्सचर लोई, जैकेट शॉल, कढ़ाई शॉल, कैशमीलोन प्लेन क्लॉथ, चैक शर्टिंग क्लॉथ में हर प्रकार की वैरायटी बनती है और रेट भी कम हैं। कृपया एक बार जरूर सम्पर्क करें।

ARYA TEXTILE

Manufactures of :
All Kinds Handloom Bed Sheets & Furnishing Fabrics

M : 98963-19774, 95412-88174, 98964-01919

Specialist in : BABY BLANKETS & READYMADE CURTAINS

हम Readymade Curtains, Jachets, Guddad, Loi, Mat, Baby Soft Shawls, Baby Blankets, Acrylic Blankete, Rajai Khol (Dohar), Rajai, comforter, AC Set, Velvet Joda & 3D Bed Sheets, Dhari etc. आदि के निर्माता हैं। इसके अलावा मिंक व पोलर कम्बल (Mink & Polar) आदि भी बेचते हैं और रेट भी कम हैं। कृपया एक बार जरूर सम्पर्क करें।

Factory :
Opp. RK School,
Kutani Road, Panipat-132103

PREMIUM QUALITY

Shop :
665/4, Pachranga Bazar,
Panipat-132103

Baby Blankets / Mink Blankets / Quilts / Comforters / Jackets / Duvet Covers / Shawls / Fleece Blankets

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

TPM Certified

ISO / TS - 16949 - 2002 Certified

ISO - 14001 Certified

OHSAS - 18001 Certified

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बर्स बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर/फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है ।

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स/गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस/विन्डो बैलेन्सर्स

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2021-2023 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

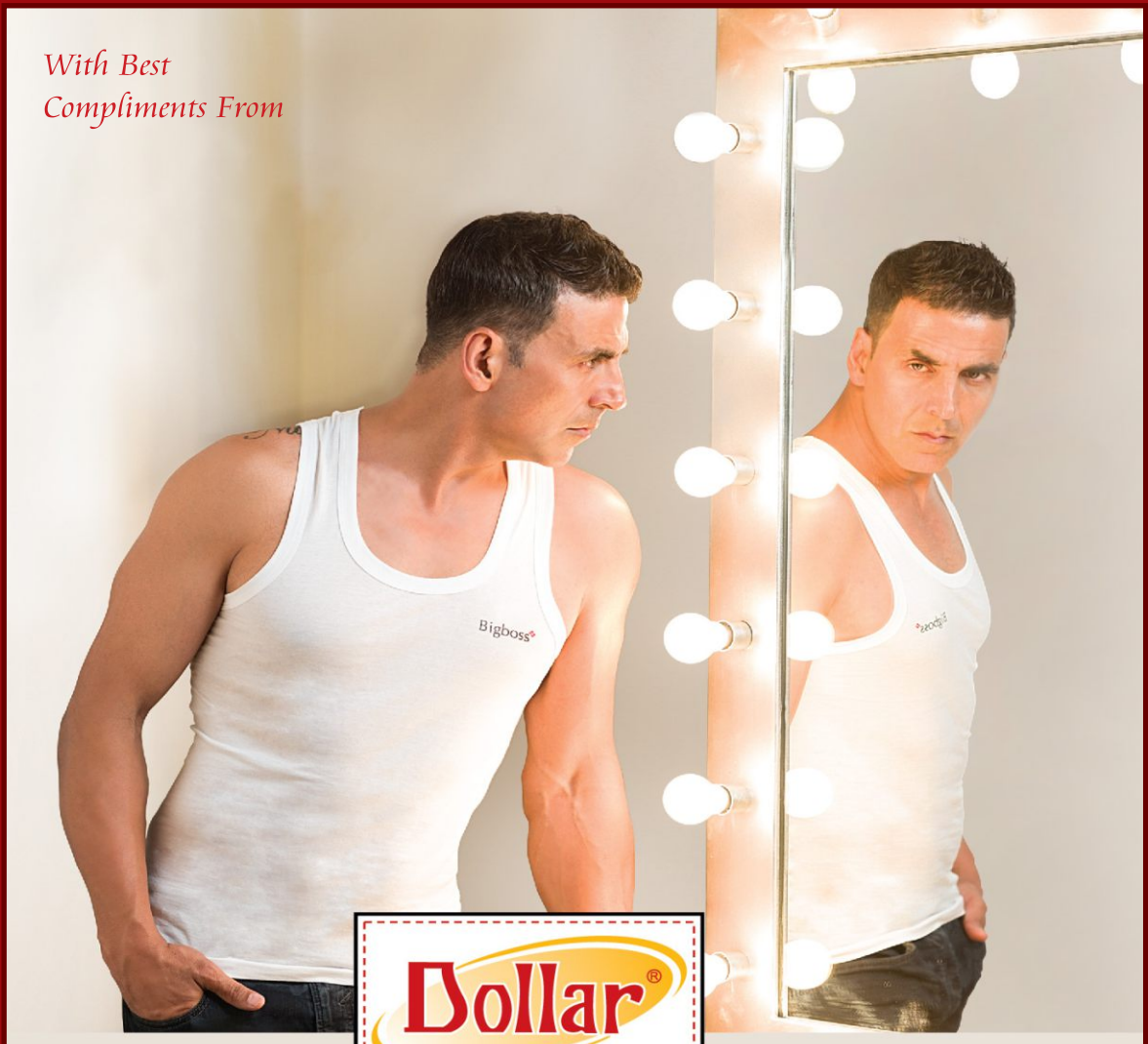

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।

संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री